कहानी संग्रह

ओशो प्रवचनों से संकलित

की प्रस्तुति

कुमाशपुर–दीपालपुर रोड

जिला: सोनीपत, हरियाणा 131021

Rajneeshfragrance

+91 7988229565
+91 7988969660
+91 7015800931

मुख्य बिन्दु

थोड़ा सा संबंध
परमात्मा का सहारा
जीवन दुख की लंबी कथा
जीवन कहां है
सस्ती तरकीबें
इज इट सो
जीवन है भीतर
निषेध: मन के लिए निमंत्रण
मुनि शांतिनाथ
आत्मा परमात्मा
यू आर स्टिल कैराइंग
हम वहीं हैं जहां थे
सत्य शब्द में नहीं है
एक चीज की कमी
दमन करने वाला चित्त
सूक्ष्म उलझनें
होश भरा आदमी
नास्तिकता और धार्मिकता का मापदंड
शिष्यत्व
जीना ही है लक्ष्य
जिएंगे कभी
यही तेरी साधना
स्वर्ग नरक
जिंदगी एक सराय

भूमिका

कहानियां भला किसे पसंद नहीं आतीं–छोटे बच्चों से लेकर बड़े-बूढ़ों तक सभी को भाती हैं! फिर आनंद तब और बढ़ जाता है जब इन कथानकों में कोई सार-संदेश भी छिपा हो।

ओशो ने जिस कुशल तरीके से छोटी-छोटी घटनाओं में गूढ़ तत्व छिपाकर श्रोताओं के हृदय को स्पर्श किया है, वह अनुपम है। क्लिष्ट भाषा में जटिल दार्शनिक सिद्धांत प्रस्तुत करना ओशो को कभी पसंद नहीं रहा। जब वे जबलपुर विश्वविद्यालय में अध्यापन करते; तो विज्ञान, मेडिकल, इंजीनियरिंग और कला के विद्यार्थी भी उनकी कक्षा में खिंचे चले आते थे।

जीवन की सहज-सामान्य सी घटनओं को अपनी प्रज्ञा से ओतप्रोत कर रसपूर्ण और शिक्षाप्रद बनाने की, ओशो की अनूठी कला का स्वाद लीजिए। प्रस्तुत कथा संग्रह परमगुरु ओशो द्वारा दिए गये प्रवचनमाला 'संभोग से समाधि की ओर, संबोधि के क्षण एवं संतो मगन भया मन मेरा' से संकलित हैं।

–मा ओशो ध्वनि

थोड़ा सा संबंध

मैं ने सुना है, एक सम्राट ने अपनी सुरक्षा के लिए एक महल बनाया था। उसने ऐसा इंतजाम किया था कि महल के भीतर कोई दुश्मन न आए। उसने सारे द्वार-दरवाजे बंद कर दिए थे। सिर्फ एक दरवाजा महल में रखा था। और दरवाजे पर हजार नंगी तलवारों का पहरा था। एक छोटा छेद भी नहीं था मकान में। सारे महल के द्वार-दरवाजे बंद कर दिए थे और फिर वह बहुत निश्िंचत हो गया था। अब किसी खिड़की से, किसी द्वार से, दरवाजे से किसी डाकू की, किसी हत्यारे की, किसी दुश्मन के आने की कोई संभावना न थी।

पड़ोस के राजा ने सुना, वह उसके महल को देखने आया। वह भी उसके महल को देख कर बहुत प्रसन्न हुआ।

आदमी ऐसा पागल है, बंद दरवाजों को देख कर बहुत प्रसन्न होता है। क्योंकि बंद दरवाजों को वह समझता है—सुरक्षा, सिक्योरिटी, सुविधा।

उस राजा ने भी महल देख कर कहा, हम भी एक ऐसा महल बनाएंगे। यह महल तो बहुत सुरक्षित है। इस महल में तो निश्िंचत रहा जा सकता है।

जब पड़ोसी राजा द्वार पर आकर विदा हो रहा था और इस मित्र राजा के महल की प्रशंसा कर रहा था, तब सड़क पर बैठा हुआ एक बूढ़ा भिखारी जोर से हंसने लगा। उस भवन के मालिक ने पूछा, तू हंसता क्यों है? कोई भूल तुझे दिखाई पड़ती है?

उस भिखारी ने कहा, एक भूल रह गई है, महाराज! जब आप यह मकान तैयार करवाते थे, तभी मुझे लगता था कि एक भूल रह गई है।

उस सम्राट ने कहा, कौन सी भूल?

उस भिखारी ने कहा, एक दरवाजा आपने रखा है, यही भूल रह गई है। यह दरवाजा और बंद कर लें, और भीतर हो जाएं, तो फिर आप बिलकुल सुरक्षित हो जाएंगे। फिर कोई भी किसी हालत में भीतर नहीं पहुंच सकता है।

उस सम्राट ने कहा, पागल, फिर तो यह मकान कब्र हो जाएगा। अगर मैं एक दरवाजा और बंद कर लूं, तो मैं मर जाऊंगा भीतर। फिर तो यह मौत हो जाएगी।

उस भिखारी ने कहा, इतना आपको समझ आता है कि एक दरवाजा और

बंद कर लेने से आप मर जाएंगे, क्या आपको यह समझ में नहीं आता कि जितने दरवाजे आपने बंद किए हैं, उसी मात्रा में आप मर गए हैं? एक-एक दरवाजा आपने बंद किया है, उसी मात्रा में जीवन से आपके संबंध टूट गए हैं। अब एक दरवाजा बचा है, तो थोड़ा सा संबंध बचा है, आप थोड़े से जीवित हैं। इसको भी बंद कर देंगे, तो बिलकुल मर जाएंगे। लेकिन यह मकान कब्र है जिसमें एक दरवाजा है। यह दरवाजा और बंद हो जाए तो कब्र पूरी हो जाएगी। और अगर आपको यह लगता है कि एक दरवाजा बंद करने से मौत हो जाएगी, तो जो दरवाजे बंद हैं उनको खोल लें। और अगर मेरी बात समझें तो सब दीवालें गिरा दें, ताकि खुले सूरज के नीचे और खुले आकाश के नीचे पूरा जीवन उपलब्ध हो।

लेकिन शरीर के लिए मकान जरूरी है, और शरीर के लिए दीवालें भी जरूरी हैं। पर आत्मा के लिए न तो मकान जरूरी है और न दीवालें जरूरी हैं। लेकिन जिनके पास शरीर को छिपाने के लिए मकान नहीं, उन्होंने भी अपनी आत्मा को छिपाने के लिए दीवालें और मकान बना रखे हैं! जो खुले आकाश के नीचे सोते हैं, उनकी आत्माएं भी खुले आकाश में नहीं उड़ती हैं! जिनके शरीर पर वस्त्र नहीं हैं, उन्होंने भी आत्मा के लिए लोहे के वस्त्र पहना रखे हैं! और फिर आदमी पूछता है, हम दुखी क्यों हैं? फिर आदमी पूछता है, हम पीड़ित क्यों हैं? फिर आदमी पूछता है, आनंद कहां मिलेगा?

कभी परतंत्र चित्त को आनंद मिला है? कभी परतंत्रता ने सुख जाना है? कभी परतंत्र व्यक्ति कभी भी किसी भी स्थिति में सत्य को, सौंदर्य को उपलब्ध हुआ है?

मैं एक घर में मेहमान था। एक बहुत प्यारी चिड़िया उस घर के लोगों ने कैद कर रखी थी। जिस पिंजड़े में वह चिड़िया बंद थी, वह चारों तरफ कांच से घिरा था। चिड़िया को बाहर का जगत दिखाई पड़ता होगा, लेकिन उस कांच की दीवाल के भीतर बंद चिड़िया को पता भी नहीं हो सकता कि बाहर एक खुला आकाश है, और उस बाहर खुले आकाश में उड़ने का भी आनंद है। शायद वह चिड़िया उड़ने का खयाल भी भूल गई होगी। शायद उसके पंख किसलिए हैं, यह भी उसे पता नहीं रहा होगा। और अगर आज उसे बाहर भी कर दिया जाए, तो शायद वह घबड़ाएगी और अपने सुरक्षित पिंजड़े में वापस आ जाएगी। उसके पास पंख किसलिए हैं, यह भी उस चिड़िया को पता नहीं

है। शायद पंख उसे निरर्थक लगते होंगे, बोझ लगते होंगे। और उसे यह भी पता नहीं है कि उस खुले आकाश में सूरज की तरफ बादलों के पार उड़ जाने का भी एक आनंद है, एक जीवन है। वह उसे कुछ भी पता नहीं है।

उस चिड़िया को कुछ भी पता नहीं है; हमें पता है? हमने भी कांच की दीवालें बना रखी हैं। उन कांच की दीवालों के पार, बियांड, उनके अतीत भी कोई लोक है—जहां कोई सीमा नहीं छूटती; जहां आगे, और आगे अनंत विस्तार है; जहां सूरज है, जहां बादलों के अतीत आगे खुला आकाश है।

नहीं, हमें भी उसका कोई पता नहीं है। शायद हमें भी आत्मा एक बोझ मालूम पड़ती है। और हममें से बहुत से लोग अपनी आत्मा को खो देने की हर चेश करते हैं। हमें आत्मा भी एक बोझ मालूम पड़ती है, इसलिए शराब पीकर आत्मा को भुला देने की कोशिश करते हैं, संगीत सुन कर भुला देने की कोशिश करते हैं। किसी तरह आत्मा भूल जाए, इसकी चेश करते हैं। वह आत्मा भी एक बोझ है, जैसे उस चिड़िया को पंख बोझ मालूम होते होंगे। क्योंकि हमें पता नहीं कि एक आकाश है, जहां आत्मा भी पंख बन जाती है। और आकाश की एक उड़ान है, जिस उड़ान की उपलब्धि का नाम ही प्रभु है, परमात्मा है। धर्म मनुष्य को मुक्त करने की कला है।

परमात्मा का सहारा

रवींद्रनाथ एक रात नाव में यात्रा कर रहे थे। छोटी सी मोमबत्ती जला कर कोई किताब पढ़ते रहे थे। आधी रात को थक गए, तब मोमबत्ती फूंक मार कर बुझा दी, किताब बंद की—एकदम देख कर हैरान हो गए! वह छोटा सा बजरा, नाव, उसमें बैठे थे। जैसे ही मोमबत्ती बुझी—चारों तरफ से पूर्णिमा की रात थी बाहर, उस मोमबत्ती के कारण पता ही नहीं चलता था कि बाहर पूर्णिमा की रात भी है। छोटी सी मोमबत्ती इतने बड़े चांद को रोक सकती है! मोमबत्ती के बुझते ही सारे चांद की किरणें बजरे के रंध्र-रंध्र, छिद्र-छिद्र से, खिड़की से, द्वार से भीतर आकर नाचने लगीं। रवींद्रनाथ भी उन किरणों के साथ खड़े होकर नाचने लगे। उस रात उन्होंने एक

गीत गाया और उस गीत में कहा कि मैं कैसा पागल था! एक छोटी सी मोमबत्ती के प्रकाश्ठा में, मद्धिम, धीमे, गंदे प्रकाश्ठा में बैठा रहा। और चांद का प्रकाश्ठा बाहर बरसता था, उसका मुझे कुछ पता ही न था। मैं अपनी मोमबत्ती से ही बंधा रहा। जब मोमबत्ती बुझ गई, तब मुझे पता चला कि बाहर द्वार पर अनंत आलोक भी प्रतीक्षा करता था। मोमबत्ती के बुझते ही वह भीतर आ गया।

जो आदमी भी मत की, सिद्धांत की, श्ठाास्त्र की मोमबत्तियों को जलाए बैठे रहते हैं, वे परमात्मा के अनंत प्रकाश्ठा से वंचित रह जाते हैं। मत बुझ जाए, तो सत्य प्रवेश्ठा करता है। और जो आदमी सब पर पकड़ छोड़ देता है, उस पर परमात्मा की पकड़ श्ठाुरू हो जाती है। जो आदमी सब सहारे छोड़ देता है, उसे परमात्मा का सहारा उपलब्ध हो जाता है।

बेसहारा होना परमात्मा का सहारा पा लेने का रास्ता है। सब रास्ते छोड़ देना, उसके रास्ते पर खड़े हो जाने की विधि है। सब श्ठाब्द, सब सिद्धांतों से मुक्त हो जाना, उसकी वाणी को सुनने का अवसर निर्मित करना है।

मैंने एक छोटी सी कहानी सुनी है। मैंने सुना है, कृज़्ण भोजन करने बैठे हैं, रुक्मणि पंखा झलती थीं। अचानक वे थाली छोड़ कर उठ पड़े, द्वार की तरफ भागे। रुक्मणि ने कहा, क्या हुआ है? कहां भागते हैं? लेकिन श्ठाायद इतनी जल्दी थी कि वे उत्तर देने को भी रुके नहीं, द्वार तक गए पागल की तरह भागते हुए, फिर द्वार पर ठिठक कर खड़े हो गए, फिर उदास वापस लौट आए, फिर थाली पर बैठ गए। रुक्मणि ने पूछा, मुझे बहुत हैरानी में डाल दिया! एक तो पागल की भांति भागना बीच भोजन में, मैंने पूछा तो उत्तर भी नहीं दिया! फिर द्वार से वापस भी लौट आना! क्या था प्रयोजन?

कृज़्ण ने कहा, बहुत जरूरत आ गई थी। मेरा एक प्यारा एक राजधानी से गुजर रहा है। राजधानी के लोग उसे पत्थर मार रहे हैं। उसके माथे से खून बह रहा है। उसका सारा श्ठारीर लहूलुहान हो गया है। उसके कपड़े उन्होंने फाड़ डाले हैं। भीड़ उसे घेर कर पत्थरों से मारे डाल रही है। और वह खड़ा हुआ गीत गा रहा है। न वह गालियों के उत्तर दे रहा है, न पत्थरों के उत्तर दे रहा है। जरूरत पड़ गई थी कि मैं जाऊं, क्योंकि वह कुछ भी नहीं कर रहा है, वह बिलकुल बेसहारा खड़ा है। मेरी एकदम जरूरत पड़ गई थी।

रुक्मणि ने पूछा, लेकिन आप लौट कैसे आए? द्वार से वापस आ गए हैं!

कृज़्ण ने कहा कि द्वार तक गया, तब तक सब गड़बड़ हो गई। वह आदमी

बेसहारा न रहा। उसने पत्थर अपने हाथ में उठा लिया। अब वह खुद ही पत्थर का उत्तर दे रहा है। अब मेरी कोई जरूरत न रही। मैं वापस लौट आया। वह आदमी खुद ही सहारा खोज लिया है। अब वह बेसहारा नहीं है।

यह कहानी सच हो कि झूठ। इस कहानी के सच और झूठ होने से मुझे कोई प्रयोजन नहीं है। लेकिन एक बात मैं अपने अनुभव से कहता हूं, जिस दिन आदमी बेसहारा हो जाता है, उसी दिन परमात्मा के सारे सहारे उसे उपलब्ध हो जाते हैं। लेकिन हम इतने कमजोर हैं, हम इतने डरे हुए लोग हैं कि हम कोई न कोई सहारा पकड़े रहते हैं। और जब तक हम सहारा पकड़े रहते हैं तब तक परमात्मा का सहारा उपलब्ध नहीं हो सकता है।

जीवन दुख की लंबी कथा

करोड़ों बीज में से अगर एक बीज में अंकुर आए और करोड़ों बीज बीज ही रह कर सड़ें और समाप्त हो जाएं, यह कोई सुखद स्थिति नहीं हो सकती। लेकिन मनुष्य-जाति के पूरे इतिहास को उठा कर देखें तो अंगुलियों पर गिने जा सकें, ऐसे थोड़े से मनुष्य पैदा होते हैं। शेष सारी मनुष्यता की कोई भी कथा नहीं है! शेष सारे मनुष्य बिना किसी सौंदर्य को जाने, बिना किसी सत्य को जाने जीते हैं और नश हो जाते हैं! क्या इस जीवन को हम जीवन कहें?

एक फकीर का मुझे स्मरण आता है। कभी वह सम्राट था, फिर फकीर हो गया। जो जानते हैं वे सम्राट होते हैं और फकीर हो जाते हैं। और जो नहीं जानते वे फकीर भी पैदा हों तो सम्राट होने की कोशिश में ही जीते हैं और मर जाते हैं। वह पैदा तो सम्राट हुआ था, लेकिन फिर फकीर हो गया। और जिस राजधानी में पैदा हुआ था, उसी राजधानी के बाहर एक झोपड़े में रहने लगा। लेकिन उसके झोपड़े पर अक्सर उपद्रव होने लगा। जो भी आता, उसी से झगड़ा हो जाता! रास्ते पर था झोपड़ा, गांव से कोई चार मील बाहर था, चौराहे पर था। राहगीर उससे पूछते कि बस्ती कहां है? रास्ता कहां है? वह फकीर कहता, बस्ती ही जाना चाहते हो? तो बाईं तरफ भूल कर मत जाना, दाईं तरफ के रास्ते से जाना, तो बस्ती पहुंच जाओगे।

लोग उसकी बात मान कर दाईं तरफ जाते, और दो-चार मील चल कर मरघट में पहुंच जाते! वहां कहां बस्ती थी, वहां तो सिर्फ कब्रें थीं! वे क्रोध में वापस आते और कहते कि पागल हो तुम? हमने पूछा था बस्ती का रास्ता, और तुमने मरघट का बताया! तब वह फकीर हंसने लगता और कहता, फिर हमारी परिभाषा फर्क-फर्क मालूम पड़ती है। मैं तो उसी को बस्ती कहता हूं। क्योंकि तुम जिसे बस्ती कहते हो, उसमें तो कोई भी बसा हुआ नहीं है। कोई आज उजड़ जाएगा, कोई कल। वहां तो मौत रोज आती है और किसी को उठा ले जाती है। वह, जिसे तुम बस्ती कहते हो, वह तो मरघट है। वहां मरने वाले लोग प्रतीक्षा कर रहे हैं मृत्यु की। मैं इसी को बस्ती कहता हूं, जिसे तुम मरघट कहते हो; क्योंकि वहां जो एक बार बस गया, वह बस गया। फिर उसकी मौत नहीं होती, फिर उजड़ना नहीं पड़ता। तो बस्ती मैं उसे कहता हूं, जहां बस गए लोग फिर उखड़ते नहीं, वहां से हटते नहीं।

लेकिन पागल रहा होगा वह फकीर। लेकिन क्या दुनिया के सारे समझदार लोग पागल रहे हैं? दुनिया के सारे समझदार एक बात कहते हैं कि जिसे हम जीवन समझते हैं, वह जीवन नहीं है। और चूंकि हम गलत जीवन को जीवन समझ लेते हैं, इसलिए जिसे हम मृत्यु समझते हैं, वह भी मृत्यु नहीं है। हमारा सब कुछ ही उलटा है। हमारा सब कुछ ही अज्ञान से भरा हुआ और अंधकार से पूर्ण है। फिर जीवन क्या है? और उस जीवन को जानने और समझने का द्वार और मार्ग क्या है?

बुद्ध के पास एक बूढ़ा भिक्षु था। बुद्ध ने एक दिन उस बूढ़े भिक्षु को पूछा कि मित्र, तेरी उम्र क्या है? उस भिक्षु ने कहा, आप भलीभांति जानते हैं, फिर भी पूछते हैं? मेरी उम्र पांच वर्ष है।

बुद्ध बहुत हैरान हुए और कहने लगे, कैसी मजाक करते हैं? पांच वर्ष! पचहत्तर वर्ष से कम तो आपकी उम्र न होगी।

वह बूढ़ा कहने लगा, हां, सत्तर वर्ष भी जीया हूं, लेकिन वे जीने के वर्ष नहीं कहे जा सकते। उनकी गिनती उम्र में कैसे करूं? पांच वर्षों से जीवन को जाना है, इसलिए पांच ही वर्ष उम्र की गिनती करता हूं। वे सत्तर वर्ष सोते बीत गए—नींद में, बेहोशी में, मूर्च्छा में। उनकी गिनती कैसे करूं? नहीं जानता था जीवन को, तो फिर उनको भी गिनती कर लेता था। जब से जीवन को जाना, तब से उनकी गिनती करनी बहुत मुश्किल हो गई है।

बुद्ध ने अपने भिक्षुओं को कहा, भिक्षुओ, आज से तुम भी अपनी गिनती जीवन की इसी भांति करना।

यही मैं आपसे भी इन दिनों में कहना चाहता हूं कि जिसे हम अब तक जीवन जान रहे हैं, वह जीवन नहीं, एक निद्रा है, एक मूर्च्छा है; एक दुख की लंबी कथा है; एक अर्थहीन खालीपन, एक मीनिंगलेस एंप्टीनेस है। जहां कुछ भी नहीं है हमारे हाथों में। जहां न हमने कुछ जाना है और न कुछ जीया है।

जीवन कहां है

मैंने सुना है, माओत्से तुंग ने अपने बचपन की एक छोटी सी घटना लिखी है। लिखा है कि मैं छोटा था तो मेरी मां का एक बगीचा था। उस बगीचे में ऐसे बड़े फूल खिलते थे कि दूर-दूर से लोग उन्हें देखने आते थे। फिर एक बार मेरी बूढ़ी मां बीमार पड़ी। वह बहुत चिंतित थी—बीमारी के लिए नहीं, अपने बगीचे के लिए—कि बगीचा कुम्हला न जाए। वह इतनी बीमार थी कि बिस्तर से उठ कर बाहर आ भी नहीं सकती थी।

तो उसके बेटे ने कहा, घबड़ाओ मत, मैं फिक्र कर लूंगा। और उसके बेटे ने पंद्रह दिन तक बहुत फिक्र की। एक-एक पत्ते की धूल झाड़ी, एक-एक पत्ते को पोंछा और चूमा। एक-एक पत्ते को सम्हाला, एक-एक फूल की फिक्र की। लेकिन न मालूम क्या, इतनी फिक्र, इतनी चिंता, बगीचा सूखता गया!

पंद्रह दिन बाद उसकी बूढ़ी मां बाहर आई तो उसका बेटा रो रहा था, और बूढ़ी मां ने देखा तो उसकी बगिया तो उजड़ गई थी! वृक्ष बेहोश होकर गिर पड़े थे, पत्ते सूख गए थे, फूल कुम्हला गए थे, कलियां कलियां ही रह गई थीं, फूल नहीं बनी थीं। उसकी मां कहने लगी कि तू क्या करता था पंद्रह दिन से सुबह से रात तक? सोता भी नहीं था! यह क्या हुआ?

उसके बेटे ने कहा, मैंने बहुत फिक्र की। मैंने एक-एक पत्ते की धूल झाड़ी। मैंने एक-एक फूल पर पानी छिड़का। मैंने एक-एक पौधे को गले लगा कर प्रेम किया। लेकिन न मालूम कैसे पागल पौधे हैं, सब कुम्हला गए, सब सूख गए।

उसकी मां की आंखों में बगिया को देख कर आंसू थे, लेकिन बेटे की

हालत देख कर वह हंसने लगी और उसने कहा, पागल, फूलों के प्राण फूलों में नहीं होते, उन जड़ों में होते हैं जो दिखाई नहीं पड़तीं और जमीन के नीचे छिपी हैं। पानी फूलों को नहीं देना पड़ता, जड़ों को देना पड़ता है। फिक्र पत्तों की नहीं करनी पड़ती, जड़ों की करनी पड़ती है। पत्तों की लाख फिक्र, तो भी जड़ें कुम्हला जाएंगी और पत्ते भी सूख जाएंगे। और जड़ों की थोड़ी सी फिक्र और पत्तों की कोई भी फिक्र नहीं, तो भी पत्ते फलते रहेंगे, खिलते रहेंगे, फूल फैलते रहेंगे, सुगंध उड़ती रहेगी। जो छिपी है जड़!

लेकिन उसके बेटे ने पूछा, जड़ें कहां हैं? वे दिखाई तो नहीं पड़ती हैं!

और अधिक आदमी भी यही पूछते हैं–जीवन कहां है? वह दिखाई नहीं पड़ता, बहुत छिपा है–अपने ही भीतर, अपनी ही जड़ों में। बाहर जहां दिखाई पड़ता है सब कुछ, वहां पत्ते हैं, शाखाएं हैं। अदृश्य, भीतर, जहां दिखाई नहीं पड़ता और घोर अंधकार है, वहां जड़ें हैं जीवन की।

सूत्र समझ लेना जरूरी है और वह यह कि जीवन बाहर नहीं है, भीतर है। विस्तार बाहर है, प्राण भीतर है। फूल बाहर खिलते हैं, जड़ें भीतर हैं। और जड़ों के संबंध में हम सब भूल गए हैं। उस माओ पर हम हंसेंगे कि नादान था वह लड़का बहुत, लेकिन हम अपने पर नहीं हंसते हैं कि हम जीवन के बगीचे में उतने ही नादान हैं।

और अगर आदमी के चेहरे से मुस्कुराहट चली गई है, और आदमी की आंखों से शांति खो गई है, और आदमी के हृदय में फूल नहीं लगते, और आदमी की जिंदगी में संगीत नहीं बजता, और आदमी की जिंदगी एक बे-रौनक उदासी हो गई है, तो फिर हम पूछते हैं कि हम कितना तो सम्हालते हैं–कितने अच्छे मकान बनाते हैं, कितने अच्छे रास्ते बनाते हैं, कितने अच्छे कपड़े पैदा करते हैं, सब कुछ, कितनी अच्छी शिक्षा देते हैं, कितने विद्यालय निर्मित करते हैं, कितना विज्ञान विस्तार करता है–सब तो हम करते हैं, लेकिन आदमी कुम्हलाता क्यों चला जाता है?

वह हम वही पूछते हैं जो उस लड़के ने पूछा था कि मैंने एक-एक पत्ते को सम्हाला, लेकिन फूल क्यों कुम्हला गए? पौधे क्यों कुम्हला गए?

आदमी कुम्हला गया है, क्योंकि हम बाहर सम्हाल रहे हैं। और ध्यान रहे–और यही बात बहुत महत्वपूर्ण है–कि बाहर जिनको हम भौतिकवादी

कहते हैं वे ही केवल बाहर नहीं देखते, जिनको हम अध्यात्मवादी कहते हैं, दुर्भाग्य है, वे भी बाहर ही देखते हैं और बाहर ही सम्हालते हैं!

भौतिकवादी तो बाहर सम्हालेगा, क्योंकि भौतिकवादी मानता है भीतर जैसी कोई चीज ही नहीं है। भीतर है ही नहीं। भौतिकवादी कहता है, भीतर कोरा शब्द है। भीतर कुछ भी नहीं है। हालांकि यह बड़ी अजीब बात मालूम पड़ती है। क्योंकि जिसका भी बाहर होता है, उसका भीतर अनिवार्य रूप से होता है। यह असंभव है कि बाहर ही बाहर हो और भीतर न हो। अगर भीतर न हो, तो बाहर नहीं हो सकता है। अगर एक मकान की बाहर की दीवाल है, तो भीतर भी होगा। अगर एक पत्थर की बाहर की रूप-रेखा है, तो भीतर भी कुछ होगा। बाहर की जो रूप-रेखा है, वह भीतर को ही घेरने वाली रूप-रेखा होती है। बाहर का अर्थ है, भीतर को घेरने वाला। और अगर भीतर न हो, तो बाहर कुछ भी नहीं हो सकता।

लेकिन भौतिकवादी कहता है कि भीतर कुछ नहीं, इसलिए भौतिकवादी को क्षमा किया जा सकता है। लेकिन अध्यात्मवादी भी सारी चेश बाहर करता है। वह भी कहता है, ब्रह्मचर्य साधो! वह भी कहता है, अहिंसा साधो! वह भी कहता है, सत्य साधो! वह भी गुणों को साधने की कोशिश करता है!

अहिंसा, ब्रह्मचर्य, प्रेम, करुणा, दया–सब फूल हैं, जड़ उनमें से कोई भी नहीं है।

जड़ सम्हल जाए, तो अहिंसा अपने आप पैदा हो जाती है। और अगर जड़ न सम्हले, तो अहिंसा को जिंदगी भर सम्हालो, अहिंसा पैदा नहीं होती। बल्कि अहिंसा के पीछे निरंतर हिंसा खड़ी रहती है। और वह हिंसक बेहतर, जो हिंसक है; वह अहिंसक बहुत खतरनाक, जो भीतर हिंसक है।

जिन मुल्कों ने अध्यात्म की बहुत बात की है, उन्होंने बाहर से एक थोथा अध्यात्म पैदा कर लिया है। बाहर का जो थोथा अध्यात्म है, वह गुणों पर जोर देता है, अंतस पर नहीं। वह कहता है–सेक्स छोड़ो, ब्रह्मचर्य साधो! वह कहता है–झूठ छोड़ो, सत्य को साधो! वह कहता है–कांटे हटा लो, फूल-फूल पैदा करो! लेकिन वह इसकी बिलकुल फिक्र नहीं करता कि फूल कहां से पैदा होते हैं, वे जड़ें कहां हैं? और अगर वे जड़ें न सम्हाली जाएं, तो फूल पैदा होने वाले नहीं हैं। हां, कोई चाहे तो बाजार से कागज के फूल लाकर अपने ऊपर चिपका सकता है।

सस्ती तरकीबें

हम जो हैं, उसे छिपाने को हमने सस्ती तरकीबें खोज ली हैं। एक आदमी पाप करता है—और कौन आदमी पाप नहीं करता—और फिर गंगा जाकर स्नान कर आता है! और निश्चिंत हो जाता है। गंगा-स्नान से पाप मिट गए?

रामकृष्ण के पास एक आदमी गया और कहा, परमहंस, गंगा-स्नान को जा रहा हूं, आशीर्वाद दे दें!

रामकृष्ण ने कहा, किसलिए कष्ट कर रहा है? किसलिए गंगा को तकलीफ देने जा रहा है? मामला क्या है? गंगा भी घबड़ा गई होगी। आखिर कितना जमाना हो गया पापियों के पाप धोते-धोते।

वह आदमी कहने लगा कि हां, उसी के लिए जा रहा हूं कि पापों से छुटकारा हो जाए। आशीर्वाद दे दें।

रामकृष्ण ने कहा, तुझे पता है, गंगा के किनारे जो बड़े-बड़े झाड़ होते हैं, वे देखे, वे किसलिए हैं?

उस आदमी ने कहा, किसलिए हैं? मुझे पता नहीं।

रामकृष्ण ने कहा, पागल, तू गंगा में डूबेगा, पाप बाहर निकल कर झाड़ों पर बैठ जाएंगे। फिर निकलेगा पानी से कि नहीं? वे झाड़ों पर बैठे रास्ता देखेंगे कि बेटे निकलो और हम तुम पर फिर सवार हो जाएं! वे झाड़ इसीलिए हैं गंगा के किनारे। कब तक पानी में डूबे रहोगे? निकलोगे तो! बेकार मेहनत मत करो, रामकृष्ण ने उससे कहा, तुमको भी तकलीफ होगी, गंगा को भी, पापों को भी, वृक्षों को भी। इस सस्ती तरकीब से कुछ हल नहीं है।

लेकिन हम सब सस्ती तरकीबें खोज रहे हैं। गंगा-स्नान कर लेंगे। और गंगा-स्नान जैसे ही मामले हैं हमारे सारे। एक ऊपर से व्यक्तित्व खड़ा करने की कोशिश करते हैं—उसे झुठलाने के लिए, जो हम भीतर हैं।

टाल्सटाय एक दिन सुबह-सुबह चर्च गया। जल्दी थी, अंधेरा था अभी, रास्ते पर कोहरा पड़ रहा था, पांच ही बजे होंगे। जल्दी गया था कि अकेले

में कुछ प्रार्थना कर लूंगा। जाकर देखा कि उसके पहले भी कोई आया हुआ है। अंधेरे में, चर्च के द्वार पर हाथ जोड़े हुए एक आदमी खड़ा है। और वह आदमी कह रहा है कि हे परमात्मा, मुझसे ज्यादा पापी कोई भी नहीं है। मैंने बड़े पाप किए हैं; मैंने बड़ी बुराइयां की हैं; मैंने बड़े अपराध किए हैं; मैं बिलकुल हत्यारा हूं। मुझे क्षमा करना!

टाल्सटाय ने देखा कि कौन आदमी है जो अपने मुंह से कहता है कि मैंने पाप किए, मैं हत्यारा हूं! कोई आदमी नहीं कहता। बल्कि हत्यारे से कहो कि हत्यारे हो, तो तलवार लेकर खड़ा हो जाएगा, कहेगाः किसने कहा? हत्या करने को राजी हो जाएगा, लेकिन यह मानने को राजी नहीं होगा कि मैं हत्यारा हूं। यह कौन आदमी आ गया? टाल्सटाय धीरे-धीरे सरक कर पास पहुंच गया। आवाज पहचानी हुई मालूम पड़ी। यह तो नगर का सबसे बड़ा धनपति था! उसकी सारी बातें टाल्सटाय खड़े होकर सुनता रहा।

जब वह आदमी लौटा, टाल्सटाय को देख कर उस आदमी ने कहा, क्या तुमने मेरी बातें सुनीं?

टाल्सटाय ने कहा, मैं धन्य हो गया तुम्हारी बातें सुन कर। तुम इतने पवित्र आदमी हो कि अपने सब पाप को तुमने इस तरह खोल कर रख दिया!

उसने कहा, ध्यान रहे, यह बात किसी से कहना मत! यह मेरे और परमात्मा के बीच थी। मुझे पता भी नहीं था कि तुम यहां खड़े हुए हो। अगर बाजार में यह बात पहुंची, तो मानहानि का मुकदमा चलाऊंगा।

टाल्सटाय ने कहा, अरे, अभी तो तुम कहते थे...

उसने कहा, वह सब दूसरी बात है। वह तुमसे मैंने नहीं कहा और दुनिया से कहने के लिए नहीं है। वह अपने और परमात्मा के बीच की बात है!

चूंकि परमात्मा कहीं भी नहीं है, इसलिए उसके सामने हम नंगे खड़े हो सकते हैं। लेकिन जो आदमी जगत के सामने सच्चा होने को राजी नहीं है, उसके सामने परमात्मा कभी सच्चा नहीं हो सकता है। हम अपने ही सामने सच्चे होने को राजी नहीं हैं!

इज इट सो

मैंने सुना है, जापान में एक फकीर था एक गांव में, एक सुंदर युवा। था वह फकीर। सारा गांव उसे श्रद्धा करता और आदर देता। लेकिन एक दिन सारी बात बदल गई। गांव में अफवाह उड़ी कि उस फकीर से किसी स्त्री को बच्चा रह गया। वह बच्चा पैदा हुआ है। उस स्त्री ने अपने बाप को कह दिया है कि उस फकीर का बच्चा है, यह फकीर उसका बाप है। सारा गांव टूट पड़ा उस फकीर पर। जाकर उसकी झोपड़ी में आग लगा दी। सुबह सर्दी के दिन थे, वह बाहर बैठा था। उसने पूछा कि मित्रो, यह क्या कर रहे हो? क्या बात है?

तो जाकर उन्होंने उस बच्चे को उसके ऊपर पटक दिया और कहा, हमसे पूछते हो क्या बात है? यह बेटा तुम्हारा है!

उस फकीर ने कहा, इज इट सो? ऐसी बात है? अब जब तुम कहते हो तो ठीक ही कहते होओगे। क्योंकि भीड़ तो कुछ गलत कहती ही नहीं, भीड़ तो हमेशा सच ही कहती है। अब जब तुम कहते हो तो ठीक ही कहते होओगे।

वह बेटा रोने लगा, तो वह उसे समझाने लगा। गांव भर के लोग गालियां देकर वापस लौट आए उस बच्चे को उसी के पास छोड़ कर।

फिर दोपहर को जब वह भीख मांगने निकला, तो उस बच्चे को लेकर भीख मांगने निकला गांव में। कौन उसे भीख देगा? आप भीख देते? कोई उसे भीख नहीं देगा। जिस दरवाजे पर गया, दरवाजे बंद हो गए। उस रोते हुए छोटे बच्चे को लेकर उस फकीर का उस गांव से गुजरना—बड़ी अजीब सी हालत रही होगी। बच्चों की, लोगों की भीड़ उसके पीछे गालियां देती हुई।

फिर वह उस दरवाजे के सामने पहुंचा, जिसकी बेटी का यह लड़का है। और उसने उस दरवाजे के सामने आवाज लगाई कि कसूर मेरा होगा इसका बाप होने में, लेकिन इसका मेरे बेटे होने में तो कोई कसूर नहीं हो सकता। बाप होने में मेरी गलती होगी, लेकिन इसकी तो कोई गलती नहीं हो सकती। कम से कम इसे तो दूध मिल जाए।

वह लड़की द्वार पर खड़ी थी। उसके प्राण कंप गए! फकीर को भीड़ में घिरा

हुआ, पत्थर खाते हुए देख कर—वह उस बच्चे को बचा रहा है, उसके माथे से खून बह रहा है—सच्ची बात छिपाना मुश्किल हो गई। उसने अपने बाप के पैर पकड़ कर कहा कि क्षमा करें, इस फकीर को तो मैं पहचानती भी नहीं। सिर्फ इसके असली बाप को बचाने के लिए मैंने इस फकीर का झूठा नाम ले लिया!

वह बाप आकर फकीर के पैरों पर गिर पड़ा और बच्चे को छीनने लगा और कहा, क्षमा कर दें।

उस फकीर ने पूछा, लेकिन बात क्या है? बेटे को छीनते क्यों हो?

उसके बाप ने कहा—लड़की के बाप ने—कि आप कैसे नासमझ हैं! आपने सुबह ही क्यों न बताया कि यह बेटा आपका नहीं है? आप छोड़ दें, यह बेटा आपका नहीं है, हमसे भूल हो गई।

वह फकीर कहने लगा, इज इट सो? बेटा मेरा नहीं है? पर तुम्हीं तो सुबह कहते थे कि तुम्हारा है। और भीड़ तो कभी झूठ बोलती नहीं। अब तुम जब बोलते हो कि नहीं है मेरा, तो नहीं होगा।

लेकिन लोग कहने लगे कि तुम कैसे पागल हो! तुमने सुबह कहा क्यों नहीं कि बेटा तुम्हारा नहीं है? तुम इतनी निंदा और अपमान झेलने को राजी क्यों हुए?

वह फकीर कहने लगा, मैंने तुम्हारी कभी चिंता नहीं की कि तुम क्या सोचते हो। तुम आदर देते हो कि अनादर। तुम श्रद्धा देते हो कि निंदा। मैंने तुम्हारी आंखों की तरफ देखना बंद कर दिया है। क्योंकि मैं अपनी तरफ देखूं कि तुम्हारी आंखों की तरफ देखूं! और जब तक मैंने तुम्हारी तरफ देखा, तब तक अपने को देखना मुश्किल था। क्योंकि तुम्हारी आंख तो प्रतिपल बदल रही है, और हर आदमी की आंख अलग है, ये हजार-हजार दर्पण हैं, मैं किस-किस में झांकूं? मैंने अपने में ही झांकना शुरू कर दिया है। अब मुझे फिक्र नहीं कि तुम क्या कहते हो। अगर तुम कहते हो बेटा मेरा, तो सही, मेरा ही होगा। किसी का तो होगा! मेरा ही सही। अब तुम कहते हो, नहीं। तुम्हारी मर्जी, नहीं होगा मेरा। लेकिन मैंने तुम्हारी आंखों में देखना बंद कर दिया है।

और वह फकीर कहने लगा, मैं तुमसे भी कहता हूं कि कब वह दिन आएगा कि तुम दूसरों की आंखों में देखना बंद करोगे और अपनी तरफ देखना शुरू करोगे?

जीवन है भीतर

भीड़ से बचना धार्मिक आदमी का पहला कर्तव्य है। लेकिन भीड़ से बचने का मतलब नहीं कि जंगल भाग जाएं। भीड़ से बचने का मतलब क्या है? समाज से मुक्त होना धार्मिक आदमी का पहला लक्षण है, लेकिन समाज से मुक्त होने का क्या मतलब है? समाज से मुक्त होने का मतलब नहीं है कि एक आदमी भाग जाए जंगल में। वह समाज से मुक्त होना नहीं है। वह समाज की ही धारणा है संन्यासी की कि जो आदमी गांव छोड़ कर भाग जाता है, समाज उसको आदर देता है। वह समाज से भागना नहीं है। वह समाज की ही धारणा का, समाज के ही दर्पण में अपना चेहरा देखना है। गेरुआ वस्त्र पहन कर खड़े हो जाना संन्यासी हो जाना नहीं है। वह समाज की आंखों में दर्पण बनाना है, उस दर्पण में अपना प्रतिबिंब देखना है।

वह मैं आपकी आंखों में देखता हूं कि क्या आदर लाता है? अगर समाज आदर देता है एक आदमी को पत्नी और बच्चों को छोड़ कर भाग जाने के लिए, तो आदमी भाग जाता है। यहां भी वह समाज की आंखों में देख रहा है।

नहीं, यह समाज को छोड़ना नहीं है। समाज को छोड़ने का अर्थ है: समाज की आंखों में अपने प्रतिबिंब को देखना बंद कर दें। अगर जिंदगी में कोई भी क्रांति चाहिए, तो लोगों की, भीड़ की आंखों को दर्पण न समझें। वे धोखे के स्थान हैं, जहां वस्त्र दिखाई पड़ते हैं।

लेकिन इस दुनिया में वस्त्रों की कीमत है। और अगर बाहर की यात्रा करनी है, तो फिर मेरी बात कभी मत मानना। नहीं तो बाहर की यात्रा बहुत मुश्किल हो जाएगी। इस दुनिया में वस्त्रों की कीमत है, आत्माओं की कोई कीमत नहीं है।

मैंने सुना है, कवि गालिब को एक दफा बहादुर शाह ने निमंत्रण दिया था। सम्राट ने बुलाया था कि आओ भोजन को।

गालिब था गरीब आदमी। अब तक ऐसी दुनिया नहीं बन सकी कि कवि के पास भी खाने-पीने को पैसा हो सके। यह नहीं हो सका। अच्छे आदमी को

रोटी जुटानी अभी भी बहुत मुश्किल है। गालिब तो गरीब आदमी था। कविताएं लिखी थीं ऊंची, तो ऊंची कविताओं से क्या होता है? रोटियां तो नहीं आतीं। कपड़े फटे-पुराने थे। मित्रों ने कहा, बादशाह के वहां जा रहे हो, इन कपड़ों से नहीं चलेगा। बादशाहों के महल कपड़ों को पहचानते हैं। गरीब के घर में यह भी हो सकता है कि कभी बिना कपड़ों के भी चल जाए, लेकिन बादशाहों के महल में कपड़े पहचाने जाते हैं। मित्रों ने कहा कि हम उधार कपड़े ला देते हैं, तुम पहन कर चले जाओ। जरा आदमी तो मालूम पड़ोगे।

गालिब ने कहा, उधार कपड़े! यह तो बड़ी बुरी बात होगी कि मैं किसी और के कपड़े पहन कर जाऊं। मैं जैसा हूं, हूं। किसी और के कपड़े पहनने से क्या फर्क पड़ जाएगा? मैं तो मैं ही रहूंगा।

मित्रों ने कहा, छोड़ो ये फलसफे की बातें। इन तत्व-दर्शन की बातों से वहां दरवाजे पर नहीं चलेगा। हो सकता है पहरेदार वापस लौटा दें! भिखमंगे मालूम पड़ते हो।

गालिब ने कहा, मैं तो जो हूं, हूं। गालिब को बुलाया है, कपड़ों को तो नहीं बुलाया। गालिब जाएगा।

नासमझ। कहना चाहिए नादान। नहीं माना गालिब और चला गया।

दरवाजे पर जाकर जाने लगा तो द्वारपाल ने बंदूक आड़ी कर दी और कहा, कहां भीतर जाते हो?

गालिब ने कहा कि मैं महाकवि गालिब हूं। सुना है नाम कभी? सम्राट ने बुलाया है। सम्राट का मित्र हूं, भोजन पर बुलाया है।

उस सिपाही ने कहा, हटो रास्ते से! दिन भर जो भी ऐरा-गैरा आता है, सम्राट का मित्र ही बताता है अपने को! रास्ते से चलो अपने, नहीं उठा कर बंद करवा दूंगा।

गालिब ने कहा, क्या बातें कहते हो! मुझे पहचानते नहीं?

उसने कहा, तुम्हारे कपड़े बता रहे हैं कि तुम कौन हो! फटे जूते बता रहे हैं कि तुम कौन हो! अपनी शक्ल देखो आईने में जाकर कि कौन हो!

गालिब दुखी वापस लौट गया। मित्रों से कहा कि तुम ठीक कहते थे, वहां कपड़े पहचाने जाते हैं। ले आओ उधार कपड़े कहां हैं।

मित्रों ने कपड़े लाकर रखे थे। उधार कपड़े पहन कर गालिब फिर पहुंच गया। वही द्वारपाल झुक-झुक कर नमस्कार करने लगा कि आइए। गालिब बहुत

हैरान कि कैसी दुनिया है!

भीतर गया तो बहादुर शाह ने कहा, मैं बड़ी देर से प्रतीक्षा कर रहा हूं!

गालिब हंसने लगा, कुछ बोला नहीं। फिर भोजन लगा दिया गया। सम्राट खुद भोजन के लिए सामने बैठा—भोजन कराने के लिए। गालिब ने भोजन का कौर बनाया, अपने कोट को खिलाने लगा, कि ले कोट खा! पगड़ी को खिलाने लगा, कि ले पगड़ी खा!

सम्राट ने कहा, आपके भोजन करने की बड़ी अजीब तरकीबें मालूम पड़ती हैं। यह कौन सी आदत? यह आप क्या कर रहे हैं?

गालिब ने कहा कि मैं तो आया था और लौट चुका। अब कपड़े आए हैं उधार। अब जो आए हैं, उन्हीं को भोजन करा रहा हूं!

बाहर की दुनिया में कपड़े चलते हैं। बाहर की दुनिया में कपड़े ही चलते हैं! वहां आत्माओं का चलना बहुत मुश्किल है। क्योंकि बाहर जो भीड़ इकट्ठी है, वह कपड़े वालों की भीड़ है। वहां आत्मा को चलाने की बात तपश्चर्या हो जाती है। लेकिन वहां जीवन नहीं मिलता। वहां हाथ में कपड़े और लाश रह जाती है अकेली। वहां जिंदगी नहीं मिलती, राख। वहां आखिर में जिंदगी की कुल संपदा राख होती है—जली हुई। अखबार की कटिंग रख लेना साथ में, तो बात अलग है। मरते वक्त अखबार में क्या-क्या छपा था, उसको रख ले कोई साथ, तो बात अलग है। लेकिन मुट्ठी में अखबार भी राख हो जाएगा।

जीवन ही चूक जाता है। जीवन है भीतर। और भीतर वे ही मुड़ सकते हैं, जो दूसरों की आंखों में देखने की कमजोरी छोड़ देते हैं और अपनी आंखों के भीतर झांकने का साहस जुटाते हैं।

निषेद मन के लिए निमंत्रण

मन की बड़ी अदभुत प्रक्रिया है, साधारणत: पहचान में न पड़े ऐसी। और वह प्रक्रिया यह है कि मन को जिस ओर से बचाने की कोशिश की जाए, मन उसी ओर जाना शुरू हो जाता है; जहां से मन को हटाया जाए, मन वहीं पहुंच जाता है; जिस तरफ पीठ की जाए, मन के सामने वही सदा के लिए उपस्थित हो जाता है। निषेध मन के लिए निमंत्रण है, विरोध मन के लिए बुलावा है। और मनुष्य-जाति इस नियम को बिना समझे आज तक जीने की कोशिश की है!

फ्रायड ने अपनी जीवन-कथा में एक छोटा सा उल्लेख किया है। लिखा है उसने कि एक संध्या विएना के बगीचे में वह अपनी पत्नी और अपने छोटे बेटे के साथ घूमने गया। देर तक फ्रायड अपनी पत्नी से बातचीत करता रहा, टहलता रहा। फिर सांझ हो गई, द्वार बंद होने लगे बगीचे के, तो वे दोनों बगीचे के द्वार पर आए, तब पत्नी को खयाल आया कि उनका बेटा तो न मालूम कितनी देर से उन्हें छोड़ कर चला गया है! इतने बड़े बगीचे में वह पता नहीं कहां होगा! द्वार बंद होने के करीब हैं, उसे कहां खोजूं? फ्रायड की पत्नी चिंतित हो गई और घबड़ा गई।

फ्रायड ने कहा, घबड़ाओ मत! एक प्रश्न मैं पूछता हूं, तुमने उसे कहीं जाने को मना तो नहीं किया? अगर मना किया हो तो सौ में निन्यानबे मौके तुम्हारे बेटे के उसी जगह होने के हैं, जहां तुमने मना किया हो।

उसकी पत्नी ने कहा, मैंने मना किया था कि फव्वारे पर मत पहुंच जाना।

फ्रायड ने कहा, अगर तुम्हारे बेटे में थोड़ी भी बुद्धि है, तो वह फव्वारे पर होगा। कई बेटे ऐसे भी होते हैं, जिनमें बुद्धि नहीं होती। उनका हिसाब रखना फिजूल है।

पत्नी बहुत हैरान हुई। वे गए दोनों भागे हुए, वह बेटा फव्वारे पर पैर लटकाए हुए पानी से खिलवाड़ करता था।

फ्रायड की पत्नी उससे कहने लगी, बड़ा आश्चर्य! तुमने कैसे पता लगा लिया कि बेटा वहां होगा?

फ्रायड ने कहा, आश्चर्य इसमें कुछ भी नहीं। जहां रोका जाए जाने से मन

को, मन वहां जाने के लिए आकर्षित हो जाता है। जहां कहा जाए, मत जाओ! वहां एक छिपा हुआ रस, एक रहस्य शुरू हो जाता है। फ्रायड ने कहा, यह तो आश्चर्य नहीं है कि मैंने तुम्हारे बेटे का पता लगा लिया, आश्चर्य यह है कि मनुष्य-जाति इस छोटे से सूत्र का पता अब तक नहीं लगा पाई है!

और सच ही मनुष्य-जाति अब तक इस छोटे से सूत्र का पता नहीं लगा पाई। और इस छोटे से सूत्र को बिना जाने जीवन का कोई रहस्य कभी उदघाटित नहीं हो सकता। इस छोटे से सूत्र का पता न होने के कारण मनुष्य-जाति ने अपना सारा धर्म, सारी नीति, सारी समाज की व्यवस्था सप्रेशन पर, दमन पर खड़ी की है। मनुष्य का जो व्यक्तित्व हमने खड़ा किया है, वह दमन पर खड़ा है, दमन उसकी नींव है।

और दमन पर खड़ा हुआ आदमी लाख उपाय करे, जीवन की ऊर्जा का साक्षात्कार उसे कभी नहीं हो सकता। क्योंकि जिस-जिस का उसने दमन किया है, मन उसी से उलझा-उलझा नश हो जाता है।

मुनि शांतिनाथ

मैंने सुना है, एक गांव में एक बहुत क्रोधी आदमी था। इतना क्रोधी कि उसने अपनी पत्नी को धक्का देकर कुएं में गिरा दिया। जब पत्नी मर गई और उसकी लाश निकाली गई, तो वह क्रोधी आदमी जैसे एक नींद से जाग गया! उसे याद आया कि उसने जिंदगी में सिवाय क्रोध के और कुछ भी नहीं किया! इस दुर्घटना में वह एकदम सचेत हो गया। उसे बड़ा पश्चात्ताप हुआ। गांव में एक मुनि आए थे। वह मुनि के दर्शन को गया और उनके चरणों में सिर रख कर रोया, और उसने कहा कि मैं इस क्रोध से कैसे छुटकारा पाऊं? क्या रास्ता है? मैं कैसे इस क्रोध से बचूं?

मुनि ने कहा कि संन्यासी हो जाओ। छोड़ दो वह सब, जो तुम कल तक पकड़े थे।

लेकिन मजा यह है कि जिसे छोड़ो, छोड़ने के कारण ही वह और पकड़ जाता है। लेकिन वह थोड़ी गहरी बात है, वह एकदम से दिखाई नहीं पड़ती!

कहा, छोड़ दो सब! क्रोध को भी छोड़ दो! संन्यासी हो जाओ, शांत हो जाओ!

अब कोई क्रोध को छोड़ सकता है?

वह आदमी संन्यासी हो गया। उसने तत्क्षण वस्त्र फेंक दिए और नग्न हो गया! और उसने कहा कि मुझे दीक्षा दें इसी क्षण!

मुनि बहुत हैरान हुए। बहुत लोग उन्होंने देखे थे, ऐसा संकल्पवान आदमी नहीं देखा था जो इतनी शीघ्रता से संन्यासी हो जाए। उन्होंने कहा कि तू अदभुत है! तेरा संकल्प महान है! तेरा संयम महान है! तू इतनी शीघ्रता से संन्यासी होने को तैयार हो गया है सब छोड़ कर!

लेकिन मुनि को भी पता नहीं कि यह क्रोध ही है। यह क्रोध का ही दूसरा रूप है। वह आदमी, जो अपनी पत्नी को एक क्षण में धक्का दे सकता है, वह एक क्षण में नंगा खड़ा होकर संन्यासी भी हो सकता है। इन दोनों बातों में विरोध नहीं है। ये एक ही क्रोध के दो रूप हैं।

मुनि बहुत प्रभावित हुए थे। उन्होंने उसे दीक्षा दे दी और उसका नाम रख दिया—शांतिनाथ।

वह मुनि शांतिनाथ हो गया। और भी शिष्य थे मुनि के, लेकिन उस मुनि शांतिनाथ का मुकाबला करना बहुत मुश्किल था, क्योंकि उतना क्रोधी उनमें कोई भी नहीं था। दूसरे दिन में एक बार भोजन करते, तो शांतिनाथ दो-दो दिन तक भोजन नहीं करते। क्रोधी आदमी कुछ भी कर सकता है! दूसरे सीधे रास्ते से चलते थे, तो मुनि शांतिनाथ उलटे, कांटों भरे रास्ते पर चलते! दूसरे छाया में बैठते थे, तो मुनि शांतिनाथ धूप में खड़े रहते! सूख गया शरीर, कृश हो गया, काला पड़ गया, पैर में घाव पड़ गए; लेकिन मुनि की कीर्ति फैलनी शुरू हो गई, कि मुनि महान तपस्वी हैं। वह सब क्रोध ही था, जो स्वयं पर लौट आया था। वह क्रोध था, जो दूसरों पर प्रकट होता रहा था, अब वह अपने पर ही प्रकट हो रहा था।

सौ में से निन्यानबे तपस्वी स्वयं पर लौटे हुए क्रोध का परिणाम होते हैं। दूसरों को सताने की चेश रूपांतरित होकर खुद को सताने की चेश भी बन सकती है। असल में, सताने की इच्छा असली सवाल है। किसको सताने का, यह बड़ा सवाल नहीं है। दूसरों को भी सताया जा सकता है, खुद को भी सताया जा सकता है। सताने में मजा है, क्रोधी आदमी का रस है।

अब उसने दूसरों को सताना बंद कर दिया था, क्योंकि दूसरे तो थे ही नहीं; अब तो वही था, अपने को ही सता रहा था। और पहली बार एक नई घटना

घटी थी: दूसरों को सताने में लोग अपमान करते थे, खुद को सताने में लोग सम्मान करने लगे थे! लोग कहते थे महातपस्वी! मुनि की कीर्ति फैलती गई। जितनी कीर्ति फैलती गई, मुनि अपने को उतना ही टार्चर, उतना ही अपने साथ दुश्ता करते चले गए। जितनी उन्होंने दुश्ता की, उतना यश, उतना सम्मान। दो-चार वर्षों में ही गुरु से भी ज्यादा उनकी प्रतिश हो गई। फिर वे देश की राजधानी में आए।

मुनियों को देश की राजधानी में जाना बहुत जरूरी रहता है। अगर आप संन्यासियों को खोजना चाहते हों तो हिमालय जाने की कोई जरूरत नहीं है, देश की राजधानियों में चले जाइए और वहां सब मुनि और सब संन्यासी अड्डा जमाए हुए मिल जाएंगे।

वे मुनि भी राजधानी की तरफ चले। राजधानी में पुराना एक मित्र रहता था। उसे खबर मिली, वह बहुत हैरान हुआ कि जो आदमी इतना क्रोधी था, वह शांतिनाथ हो गया! चमत्कार है! जाऊं, दर्शन करूं। वह मित्र दर्शन करने आया। मुनि अपने तखत पर सवार थे। देख लिया, मित्र को पहचान भी गए। लेकिन जो लोग भी तखत पर सवार हो जाते हैं, वे कभी किसी को आसानी से नहीं पहचानते। फिर पुराने दिनों के साथी को पहचानना ठीक भी न था। उससे हम भी कभी इसी जैसे रहे हैं, इसका पता चलता है। देख लिया, पहचाने नहीं। मित्र भी समझ गया कि पहचान तो लिया है, लेकिन फिर भी पहचान नहीं रहे हैं।

आदमी ऊपर चढ़ता ही इसलिए है कि जो पीछे छूट जाएं, उनको पहचाने न। और जब बहुत लोग उसको पहचानने लगते हैं, तो वह सबको पहचानना बंद कर देता है। पद के शिखर पर चढ़ने का रस ही यह है: तुम्हें सब पहचानें, लेकिन तुम्हें किसी को न पहचानना पड़े।

मित्र पास सरक आया और उसने पूछा कि मुनि जी, क्या मैं पूछ सकता हूं आपका नाम क्या है?

मुनि जी को क्रोध आ गया। कहा, अखबार नहीं पढ़ते हो! रेडियो नहीं सुनते हो! मेरा नाम पूछते हो? मेरा नाम जगत-जाहिर है, मेरा नाम है मुनि शांतिनाथ!

उनके बताने का ढंग, मित्र समझ गया कि कोई बदलाहट तो नहीं हुई है, आदमी तो यह वही है, सिर्फ नग्न खड़ा हो गया है। दो मिनट दूसरी बात चलती रही। मित्र ने फिर पूछा कि महाराज, मैं भूल गया, आपका नाम क्या है?

मुनि की तो आंखों में आग जल उठी। उन्होंने कहा, मूढ़! नासमझ! इतनी भी बुद्धि नहीं है! अभी मैंने तुझे कहा था कि मेरा नाम मुनि शांतिनाथ है। मेरा नाम है मुनि शांतिनाथ।

मित्र, दो मिनट और दूसरी बातें चलती रहीं, सुनता रहा। फिर उसने पूछा कि महाराज, मैं भूल गया, आपका नाम क्या है?

मुनि ने डंडा उठा लिया और कहा कि सिर तोड़ दूंगा! नाम समझ में नहीं आता? मेरा नाम है मुनि शांतिनाथ!

तो उस मित्र ने कहा, सब समझ में आ गया। वही समझ में आने के लिए तीन-तीन बार पूछ रहा हूं। नमस्कार है! आप वही के वही हैं, कोई फर्क नहीं पड़ा! आप वही के वही हैं, कोई फर्क नहीं पड़ा!

दमन से कभी कोई फर्क नहीं आता है। लेकिन दमन से चीजों की शक्ल बदल जाती है। और शक्ल बदल जाना बहुत खतरनाक है, क्योंकि तब बदली हुई शक्ल में उनको पहचानना भी मुश्किल हो जाता है।

आत्मा परमात्मा

मुझे एक साध्वी के साथ समुद्र के किनारे बैठा हुआ था। वे साध्वी परमात्मा की और आत्मा की बातें कर रही थीं। हम सभी बातें आत्मा-परमात्मा की करते हैं, जिनसे हमारा कोई भी संबंध नहीं है। और जिन बातों से हमारा संबंध है, उनकी हम बात नहीं करते। क्योंकि वे छोटी-छोटी क्षुद्र बातें हैं। हम तो ऊंची बातें, आकाश की बातें करते हैं, पृथ्वी की बातें नहीं करते—जिस पृथ्वी पर चलना पड़ता है, और जिस पृथ्वी पर जीना पड़ता है, और जिस पृथ्वी पर जन्म होता है, और जिस पृथ्वी पर लाश गिरती है अंत में—उस पृथ्वी की हम बात नहीं करते! हम बात आकाश की करते हैं, जहां न हम जीते हैं, न हम चलते हैं!

वे भी आत्मा-परमात्मा की बात कर रही थीं। आत्मा-परमात्मा की बात आकाश की बात है। हवा का झोंका आया, मेरी चादर उड़ी और साध्वी को छू गई—जैसे बिच्छू छू गया हो, वे इतनी घबड़ा गईं!

मैंने पूछा, क्या हुआ?

उन्होंने कहा, पुरुष की चादर! पुरुष की चादर छूने का निषेध है।

मैं तो बहुत हैरान हुआ। मैंने कहा, चादर भी पुरुष और स्त्री हो सकती है, यह मैंने पहली दफे जाना। चमत्कार है! चादर भी स्त्री और पुरुष हो सकती है!

लेकिन ब्रह्मचर्य चादर को भी स्त्री-पुरुष में परिवर्तित कर देता है। यह सेक्सुअलिटी की अति हो गई, कामुकता की अति हो गई।

मैंने कहा, देवी, अभी तुम आत्मा की बातें करती थीं और कहती थीं—मैं शरीर ही नहीं हूं। और अब तुम चादर भी हो? अभी क्षण भर पहले तुम शरीर भी नहीं थीं। यह शरीर तो मिट्‌टी है।

अब यह चादर भी सेक्स-सिंबल बन गई, अब वह भी प्रतीक बन गई। सागर की हवाओं को क्या पता कि चादर भी पुरुष की होती है, अन्यथा सागर की हवाएं भी नियम, कोई नीति का ध्यान रखतीं। गलती हो गई सागर की हवाओं से।

वे कहने लगीं कि पश्चात्ताप, प्रायश्चित्त करना पड़ेगा, उपवास करना पड़ेगा।

मैंने उनसे कहा, करो उपवास जितना करना हो! लेकिन चादर के संपर्क से भी जिसे पुरुष का भाव पैदा होता हो, उसका चित्त ब्रह्मचर्य को कभी उपलब्ध नहीं हो सकता।

लेकिन नहीं, हम इसी तरह के ब्रह्मचर्य को पकड़े रहते हैं, इसी तरह का अलोभ, इसी तरह का त्याग, इसी तरह की नैतिकता, इसी तरह का धर्म! सब झूठा है।

दमन जहां है, वहां सब झूठा है। भीतर कुछ और हो रहा है, बाहर कुछ और हो रहा है। अब इस साध्वी को दिखाई ही नहीं पड़ सकता कि यह अति कामुकता है। यह रुग्ण कामुकता हो गई; यह बीमार स्थिति हो गई कि चादर भी स्त्री और पुरुष होती है! चादर से भी डर पैदा हो जाएगा। ठीक ब्रह्मचर्य हो तो स्त्री और पुरुष ही मिट गए। जिस ब्रह्मचर्य में पुरुष और स्त्री न मिट गए हों, वह ब्रह्मचर्य नहीं है।

बुद्ध एक जंगल में कुछ दिनों साधना करते थे। एक रात, पूर्णिमा की रात, पूरा चांद आकाश में खिला था, कुछ युवा एक वेश्या को लेकर वहां आए—रात्रि भ्रमण को, नौका विहार को। पास में झील थी। लाए होंगे शराब, पीकर शराब नाचने लगे होंगे। उस वेश्या के वस्त्र छीन कर उसे नंगा कर दिया होगा। उन्हें शराब में झूमता देख कर वह वेश्या भाग गई। रात आधी उन्हें होश आया, तो खोजने निकले। वेश्या तो नहीं मिली, एक झाड़ के नीचे बुद्ध बैठे

हुए मिल गए। वे उनसे पूछने लगे कि महाशय, यहां से एक नंगी स्त्री को, एक वेश्या को भागते तो नहीं देखा? रास्ता यही है। यहीं से वह गई होगी। रास्ते पर धूल पर उसके पदचिह्न बने हैं। आप यहां कब से बैठे हुए हैं? यहां से कोई नंगी स्त्री भागती तो नहीं गई? एक वेश्या यहां से भाग गई है।

बुद्ध ने कहा, कोई गया जरूर है, लेकिन वह स्त्री थी या पुरुष, यह बताना मुश्किल है। जब मेरे भीतर का पुरुष जागा हुआ था, तब मुझे स्त्री दिखाई पड़ती थी। न भी देखो, तो दिखाई पड़ती थी। बचना भी चाहो, तो भी दिखाई पड़ती थी। आंखें कितनी ही और कहीं मोड़ो, वे आंखें स्त्री को ही देखती थीं। जब से मेरा पुरुष विदा हो गया, तब से बहुत खयाल करूं तो पता चलता है कौन स्त्री है, कौन पुरुष है। कोई निकला जरूर, लेकिन कौन था, यह कहना मुश्किल है। तुम पहले क्यों न आए? कह गए होते कि यहां से कोई निकले थोड़ा ध्यान रखना, तो मैं ध्यान रख सकता था। और यह बताना तो और भी मुश्किल है कि जो निकला है वह नंगा था या वस्त्र पहने हुए था। क्योंकि जब तक अपने नंगेपन को छिपाने की इच्छा थी, तब तक दूसरे के नंगेपन को देखने की भी बड़ी इच्छा थी। लेकिन अब कुछ देखने की इच्छा नहीं रह गई है। इसलिए खयाल में नहीं आता कि कौन क्या पहने हुए है।

दूसरे में हमें वही दिखाई पड़ता है, जो हममें होता है। दूसरे में हमें वह नहीं दिखाई पड़ता, जो हममें न हो। बहुत मुश्किल है! हर दूसरा आदमी दर्पण की तरह काम करता है, उसमें हम दिखाई पड़ते हैं। बुद्ध कहने लगे, अब तो मुझे याद नहीं आता, क्योंकि किसी को नंगा देखने की कोई कामना नहीं है। इसलिए पता नहीं कि वह कपड़े पहने थी या नहीं पहने थी। लेकिन तुम उसकी चिंता में क्यों पड़े हो?

उन्होंने कहा कि हम चिंता न करें? हम उसे लाए थे आमोद-प्रमोद के लिए, आनंद के लिए। और वह भाग गई है। हम उसे खोज रहे हैं।

बुद्ध ने कहा, तुम जाओ और उसे खोजो। भगवान करे लेकिन किसी दिन तुम्हें यह खयाल आ जाए कि इतनी खूबसूरत और शांत रात में अगर तुम किसी और को न खोज कर अपने को खोजते, तो शायद आनंद के ज्यादा निकट हो सकते थे। लेकिन तुम जाओ, तुम खोजो जिसे तुम्हें खोजना है। मैंने भी बहुत दिन तक दूसरों को खोजा, लेकिन दूसरों को खोज कर मैंने कुछ भी न पाया। और जब से अपने को खोजा है, तब से वह सब पा लिया है जिसे पाने की कोई भी कामना हो सकती है।

यू आर स्टिल कैराइंग

कोरिया में दो फकीर थे, मैंने उनके जीवन में पढ़ा। दो भिक्षु एक दिन सांझ अपने आश्रम वापस लौटते हैं। एक बूढ़ा भिक्षु है, एक युवा भिक्षु है। आश्रम के पहले ही एक छोटी सी पहाड़ी नदी है। सांझ हो गई है, सूरज ढलता है। एक युवती खड़ी है उस पहाड़ी नदी के किनारे। उसे भी नदी पार होना है। लेकिन डरती है, अनजान है शायद नदी, परिचित नहीं है, पता नहीं कितनी गहरी हो! भयभीत है।

तो वह बूढ़ा साधु आगे आया है। उसको भी समझ में पड़ गया कि वह स्त्री पार होने के लिए चिंतित है, शायद कोई सहारा मांगती है। उसका भी मन हुआ कि हाथ से सहारा दे दूं, नदी पार करवा दूं। लेकिन हाथ का सहारा देने का खयाल भर–वर्षों की दबी हुई वासना एकदम खड़ी हो गई। वह हाथ को छूने की कल्पना ही–भीतर जैसे नस-नस में, रग-रग में कोई बिजली दौड़ गई हो। तीस वर्ष से स्त्री को नहीं छुआ था। अभी छुआ नहीं था, अभी भी छुआ नहीं था। अभी सिर्फ सोचा था कि हाथ का सहारा दे दूं। लेकिन सारे प्राण कंप गए हैं। एक बुखार सारे व्यक्तित्व को घेर लिया। अपने मन को डराया, कहा कि मैंने कैसी गंदी बात सोची! कैसे पाप की बात सोची! मुझे क्या मतलब है? कोई नदी पार हो या न हो, मुझे क्या प्रयोजन है? मैं अपना जीवन क्यों बिगाड़ूं? अपनी साधना क्यों बिगाड़ूं?

बड़ी कीमती साधना होगी, जो एक लड़की का हाथ छूने से बिगड़ जाती! बड़ी बहुमूल्य साधना रही होगी! और ऐसी ही बहुमूल्य साधना के सहारे लोग मोक्ष तक पहुंचना चाहते हैं! ऐसी ही कीमती, मजबूत साधना के पुल पर चढ़ कर परमात्मा की यात्रा करना चाहते हैं!

आंख बंद कर ली उसने, क्योंकि वह स्त्री दिखाई पड़ती थी। और वह बहुत जोर से दिखाई पड़ती थी, क्योंकि मन जाग गया था, सोई हुई वासना जाग गई थी। आंख बंद करके वह नदी उतरने लगा।

अब यह आपको पता होगा, जिस चीज से आंख बंद कर ली जाए, वह उतनी

सुंदर कभी नहीं होती आंख खुले में, जितनी आंख बंद करने पर हो जाती है।

आंख बंद हुई, और वह स्त्री अप्सरा हो गई!

अप्सराएं इसी तरह पैदा होती हैं—बंद आंख से पैदा हो जाती हैं। दुनिया में स्त्रियां हैं, आंख बंद करो कि अप्सराएं पैदा हुईं। अप्सराएं कहीं भी नहीं हैं; लेकिन आंख बंद से स्त्री अप्सरा हो जाती है! एकदम कविता पैदा हो जाती है; फूल खिल जाते हैं; चांदनी फैल जाती है। एक ऐसा सौंदर्य आ जाता है जो स्त्री में कहीं भी नहीं है, जो सिर्फ आदमी की कामवासना के सपने में होता है। आंख बंद करते ही सपना शुरू हो जाता है।

अब वह असली स्त्री को नहीं देख रहा है। अब एक ड्रीम, अब एक सपना, और वह स्त्री उसे बुला रही है। उसका मन कभी कहता है कि चलूं, यह तो बड़ी बुरी बात है कि किसी असहाय स्त्री को सहारा न दूं। फिर तत्काल उसका दूसरा मन कहता है कि यह सब बेईमानी है, अपने को धोखा देने की तरकीब कर रहे हो। यह सेवा वगैरह नहीं है, तुम स्त्री को छूना चाहते हो! बड़ी मुश्किल है उसकी। साधुओं की बड़ी मुश्किल होती है। खींच-तान है भीतर, तनाव है भीतर। सारा प्राण पीछे लौट जाना चाहता है, और वह दमन करने वाला मन आगे चला जाना चाहता है। उस नदी के छोटे से घाट पर वह आदमी दो हिस्सों में बंट गया है; एक हिस्सा आगे जा रहा है, एक हिस्सा पीछे जा रहा है। उसकी अशांति, उसका टेंशन, उसकी तकलीफ हम समझ सकते हैं। यही अशांति आदमी को पागल कर देगी।

आधा हिस्सा इस तरफ जा रहा है, आधा हिस्सा उस तरफ जा रहा है। किसी तरह खींच-तान कर उसने अपने को उस पार कर लिया है। आंखें खुल कर देखना चाहती हैं, लेकिन वह बहुत डरा हुआ है। वह भगवान का नाम लेता है, जोर-जोर से भगवान का—नमो बुद्धाय! नमो बुद्धाय!

भगवान का नाम आदमी जब भी जोर-जोर से ले, तब समझ लेना कि भीतर कुछ गड़बड़ है। उसको दबाने के लिए आदमी जोर-जोर से नाम लेता है। आदमी को ठंड लग रही हो नदी में नहाते वक्त, वह कहता है, सीता-राम, सीता-राम! वह ठंड जो लग रही है। बेचारे सीता-राम को क्यों तकलीफ दे रहे हो? उस ठंड को भुलाने की कोशिश कर रहे हो! अंधेरी गली में आदमी जाता

है और कहता है, अल्लाह ईश्वर तेरे नाम! वह अंधेरे की घबड़ाहट को भुलाना चाह रहे हो।

जो आदमी परमात्मा के निकट जाता है, वह चिचो-पों नहीं करता भगवान के नाम की; वह चुप हो जाता है। ये जितने चिचो-पों और शोरगुल मचाने वाले लोग हैं, समझ लेना कि भीतर कुछ और चल रहा है। भीतर काम चल रहा है, और ऊपर राम का नाम चल रहा है।

वह भीतर औरत खींच रही है और वह किसी तरह भगवान का सहारा लेकर आगे बढ़ा जा रहा है—कि कहीं ऐसा न हो कि औरत मजबूत हो जाए और खींच ही ले। उस स्त्री को बेचारी को पता भी नहीं है कि साधु किस मुसीबत में पड़ गया है। वह अपने रास्ते पर खड़ी है।

तभी उस साधु को खयाल आया कि पीछे उसका जवान साधु भी आ रहा है। लौट कर उसने देखा कि उसको सचेत कर दे कि वह भी कहीं इसी दया करने की भूल में न पड़ जाए जिसमें मैं पड़ गया हूं। लेकिन लौट कर देखा तो भूल तो हो चुकी है। वह जवान आदमी उस औरत को कंधे पर लिए नदी पार कर रहा है। आग लग गई उस बूढ़े साधु को! न मालूम कैसा-कैसा मन होने लगा। कई बार होने लगा कि मैं उसकी जगह कंधा लगाए होता! फिर झिड़का उसने कि यह क्या पागलपन की बात, मैं और उस औरत को कंधे पर ले सकता हूं? तीस साल की साधना नश करूंगा? गंदगी का ढेर है औरत का शरीर, तो उसको कंधे पर लूंगा? नरक का द्वार है यह औरत, इसको कंधे पर लूंगा?

लेकिन वह दूसरा युवक लिए चला आ रहा है। आग जल गई कि आज जाकर गुरु को कहूंगा कि यह युवक भ्रश हो गया, पतित हो गया; इसे निकालो आश्रम के बाहर!

फिर उस युवक ने आकर उस युवती को किनारे पर छोड़ दिया और फिर वह चल पड़ा। फिर वे दोनों चलते रहे, मील भर तक बूढ़े ने कोई बात न की। जब वे आश्रम के द्वार पर प्रविश हो रहे थे तो उस बूढ़े ने सीढ़ी पर खड़े होकर कहा कि याद रखो, मैं जाकर गुरु को कहूंगा! तुम पतित हो चुके हो! तुमने उस स्त्री को कंधे पर क्यों उठाया?

वह आदमी एकदम से चौंका। उस युवक ने कहा, स्त्री? उसको मैंने उठाया था और छोड़ भी आया। लेकिन ऐसा मालूम पड़ता है कि आप उसे अभी भी

कंधे पर लिए हुए हैं। उस युवक ने कहा, सर, यू आर स्टिल कैरीइंग हर ऑन योर शोल्डर! आप अभी भी ढो रहे हैं उसे कंधे पर! मैं तो उसे उतार भी आया। और आपने तो उसे कभी कंधे पर लिया भी नहीं था; आप अभी तक उसे क्यों ढो रहे हैं? मैं तो दो घंटे से सोचता था आप किसी ध्यान में लीन हैं। मुझे यह खबर भी न थी कि आप वही ध्यान कर रहे हैं—वही नदी का किनारा, वही स्त्री को नदी का पार करना।

हम वहीं हैं जहां थे

एक पूर्णिमा की रात एक छोटे से गांव में एक बड़ी अदभुत घटना घट गई। कुछ जवान लड़कों ने शराबखाने में जाकर शराब पी ली। और जब वे शराब के नशे में मदमस्त हो गए और शराबघर से बाहर निकले, तो चांद की बरसती चांदनी में उन्हें खयाल आया कि नदी पर जाएं और नौका-विहार करें।

रात बड़ी सुंदर और नशे से भरी हुई थी। वे गीत गाते हुए नदी के किनारे पहुंच गए। नावें वहां बंधी थीं। मछुए नाव बांध कर घर जा चुके थे। रात आधी हो गई थी। वे एक नाव में सवार हो गए। उन्होंने पतवार उठा ली और नाव खेना शुरू किया। फिर सुबह होने तक वे नाव को खेते रहे। सुबह की ठंडी हवाएं आईं, तब होश आया थोड़ा, किसी ने पूछा, कहां आ गए होंगे अब तक हम? आधी रात तक हमने यात्रा की है, न-मालूम कितनी दूर निकल आए होंगे। उतर कर कोई देख ले—किस दिशा में चल पड़े हैं, कहां पहुंच गए हैं? जो उतरा था, वह उतर कर हंसने लगा। और उसने कहा कि दोस्तो, तुम भी उतर आओ! हम कहीं भी नहीं पहुंचे हैं। हम वहीं खड़े हैं, जहां रात नाव खड़ी थी।

वे बहुत हैरान हुए। रात भर उन्होंने पतवार चलाई थी और वहीं खड़े थे! उतर कर देखा तो पता चला, नाव की जंजीरें किनारे से बंधी रह गई थीं, उन्हें वे खोलना भूल गए थे!

जीवन भी, पूरे जीवन नाव खेने पर, पूरे जीवन पतवार खेने पर, कहीं

पहुंचता हुआ मालूम नहीं पड़ता है। मरते समय आदमी वहीं पाता है, जहां वह जन्मा था! ठीक उसी किनारे पर, जहां आंख खोली थीं, वहीं आंख बंद करते समय आदमी पाता है कि वहीं खड़ा हूं। और तब बड़ी हैरानी होती है कि जीवन भर जो दौड़-धूप की थी उसका क्या हुआ? वह जो श्रम किया था कहीं पहुंचने को, वह जो यात्रा की थी, वह सब निष्फल गई? मृत्यु के क्षण में आदमी वहीं पाता है, जहां जन्म के क्षण में था! तब सारा जीवन एक सपना मालूम पड़ने लगता है। नाव कहीं बंधी रह गई किसी किनारे से!

हां, कुछ लोग—कुछ सौभाग्यशाली—मरते क्षण वहां पहुंच जाते हैं, जहां जन्म ने उन्हें नहीं बांधा। वहां जहां जीवन का आकाश है, वहां जहां जीवन का प्रकाश है, वहां जहां सत्य है, वहां जहां परमात्मा का मंदिर है—वहां पहुंच जाते हैं। लेकिन वे वे ही लोग हैं, जो किनारे से, खूंटे से जंजीर खोलने की याद रखते हैं।

शास्त्रों-सिद्धांतों की जंजीर है बड़ी गहरी। और जो शास्त्रों-सिद्धांतों से बंधा रह जाता है, वह कभी जीवन के सागर में यात्रा नहीं कर पाता है।

जीवन का सागर है—अज्ञात; और सिद्धांत और शास्त्र सब हैं—ज्ञात।

ज्ञात से अज्ञात की तरफ जाने का कोई भी मार्ग नहीं है, सिवाय ज्ञात को छोड़ने के। जो भी हम जानते हैं वह जानते हैं और जो जीवन है वह अनजान है, अननोन है; वह परिचित नहीं है। तो जो हम जानते हैं, उसके द्वारा उसे नहीं पहचाना जा सकता जिसे हम नहीं जानते हैं। जो ज्ञात है, जो नोन है, उससे अननोन को, अज्ञात को जानने का कोई द्वार नहीं है, सिवाय इसके कि ज्ञात को छोड़ दिया जाए। ज्ञात को छोड़ते ही अज्ञात के द्वार खुल जाते हैं।

सत्य शब्द में नहीं है

मैंने सुना है, एक कवि समुद्र की यात्रा पर गया है। जब वह सुबह समुद्र के तट पर जागा, इतनी सुंदर सुबह थी! इतना सुंदर प्रभात था! पक्षी गीत गाते थे वृक्षों पर। सूरज की किरणें नाचती थीं लहरों पर। लहरें उछलती थीं। हवाएं ठंडी थीं। फूलों की सुवास थी। वह नाचने लगा उस सुंदर प्रभात में। और फिर उसे याद आया कि उसकी प्रेयसी तो एक अस्पताल में बीमार पड़ी है। काश, वह भी आज यहां होती! लेकिन वह तो नहीं आ सकती। वह तो बिस्तर से बंधी है। उसके तो उठने की कोई संभावना नहीं।

तो उस कवि को सूझा कि फिर मैं यह करूं, समुद्र की इन ताजी हवाओं को, इन सूरज की नाचती किरणों को, इस संगीत को, इस सुवास को एक पेटी में बंद करके ले जाऊं। और अपनी प्रेयसी को कहूं—देख, कितनी सुंदर सुबह से एक टुकड़ा तेरे लिए ले आया हूं!

वह गांव गया और एक पेटी खरीद कर लाया। बहुत सुंदर पेटी थी। और उस पेटी में उसने समुद्र के किनारे खोल कर हवाएं भर लीं, सूरज की नाचती किरणें भर लीं, सुगंध भर ली। उस सुबह का एक टुकड़ा उस पेटी में बंद करके, ताला लगा कर सब रंध्र-रंध्र बंद कर दी, कि कहीं से वह सुबह बाहर न निकल जाए। और उस पेटी को अपने पत्र के साथ अपनी प्रेयसी के पास भेजा कि सुबह का सुंदर एक टुकड़ा, एक जिंदा टुकड़ा सागर के किनारे का तेरे पास भेजता हूं। नाच उठेगी तू! आनंद से भर जाएगी! ऐसी सुबह मैंने कभी देखी नहीं।

उस प्रेयसी के पास पत्र भी पहुंच गया, पेटी भी पहुंच गई। पेटी उसने खोल ली, लेकिन उसके भीतर तो कुछ भी न था—न सूरज की किरणें थीं, न हवाएं थीं, न कोई सुवास थी। वह पेटी तो बिलकुल खाली थी, निहायत खाली थी, उसके भीतर तो कुछ भी न था। पेटी पहुंचाई जा सकती है, जिस सौंदर्य को सागर के किनारे जाना, उसे नहीं पहुंचाया जा सकता।

जो लोग सत्य के, जीवन के सागर के तट पर पहुंच जाते हैं, वे वहां क्या जानते हैं—कहना मुश्किल है। क्योंकि हमारा सूरज, जिस प्रकाश को वे जानते हैं, उसके सामने अंधकार है। पता नहीं वे जिस सुवास को जानते हैं, हमारे किसी फूल में वह सुवास नहीं है, उसकी दूर की गंध भी नहीं है। वे जिस आनंद को जानते हैं, हमारे सुखों में उस आनंद की एक किरण भी नहीं है। वे जिस जीवन को जानते हैं, हमारे शरीर में उस जीवन का हमें पता भी नहीं है। उनके मन को भी होता है: भेज दें उनके लिए जो रास्ते पर पीछे भटक रहे हैं। थोड़ा सा टुकड़ा शब्दों की पेटियों में भर कर वे भेजते हैं—गीता में, कुरान में, बाइबिल में। हमारे पास पेटियां आ जाती हैं, शब्द आ जाते हैं; लेकिन जो भेजा था, वह पीछे छूट जाता है, वह हमारे पास नहीं आता है। फिर हम इन्हीं पेटियों को सिर पर ढोए हुए घूमते रहते हैं। कोई गीता को लेकर घूम रहा है, कोई कुरान को, कोई बाइबिल को। और चिल्ला रहा है कि सत्य मेरे पास है! मेरी किताब में है!

सत्य किसी भी किताब में न है, न हो सकता है। सत्य किसी शब्द में न है, न हो सकता है। सत्य तो वहां है, जहां सब शब्द क्षीण हो जाते हैं और गिर जाते हैं। जहां चित्त मौन हो जाता है, निर्विचार, वहां है सत्य। न वहां कोई शास्त्र जाता है, न कोई सिद्धांत जाते हैं। इसलिए जो सिद्धांतों और शास्त्रों की खूंटियों से बंधे हैं, वे कभी जीवन के सागर के तट पर नहीं जा सकेंगे।

एक चीज की कमी

मैं जो आदमी भीड़ को देख कर जीता है, वह अपने बाहर ही भटकता रह जाता है; क्योंकि भीड़ बाहर है। जिस आदमी को भीतर जाना है, उसे भीड़ से आंखें हटा लेनी पड़ती हैं। और अपनी तरफ, जहां वह अकेला है, उस तरफ आंखें ले जानी पड़ती हैं। लेकिन हम सब भीड़ से बंधे हैं; भीड़ की खूंटी से बंधे हैं।

मैंने सुना है कि एक सम्राट था। और उस सम्राट के दरबार में एक दिन एक आदमी आया और उस आदमी ने कहा कि महाराज, आपने सारी पृथ्वी जीत

ली, लेकिन एक चीज की कमी है आपके पास।

उस सम्राट ने कहा, कमी? कौन सी है कमी, जल्दी बताओ! क्योंकि मैं तो बेचैन हुआ जाता हूं। मैं तो सोचता था, सब मैंने जीत लिया।

उस आदमी ने कहा, आपके पास देवताओं के वस्त्र नहीं हैं। मैं देवताओं के वस्त्र आपके लिए ला सकता हूं।

सम्राट ने कहा, देवताओं के वस्त्र तो कभी न देखे, न सुने! कैसे लाओगे?

उस आदमी ने कहा, लाना ऐसे तो बहुत मुश्किल है, क्योंकि पहले तो देवता बहुत सरल थे। और आजकल हिंदुस्तान के सब राजनीतिज्ञ मर कर स्वर्गीय हो गए हैं, वहां बड़ी बेईमानी, बहुत करप्शन सब तरह के शुरू हो गए हैं।

हिंदुस्तान के राजनीतिज्ञ मर कर सब स्वर्गीय हो जाते हैं, नरक में तो कोई जाता नहीं। हालांकि कोई राजनीतिज्ञ स्वर्ग में नहीं जा सकता। और अगर राजनीतिज्ञ जिस दिन स्वर्ग में जाने लगेंगे, उस दिन स्वर्ग भले आदमियों के रहने योग्य जगह न रह जाएगी। लेकिन होते तो सभी स्वर्गीय हैं।

तो उसने कहा कि जब से ये सब पहुंचने लगे हैं वहां, बड़ी मुश्किल हो गई है, बहुत रिश्वत चल पड़ी है वहां। लाने भी पड़ेंगे अगर देवताओं के वस्त्र तो करोड़ों रुपये खर्च हो जाएंगे।

उस सम्राट ने कहा, करोड़ों रुपये!

उस आदमी ने कहा कि दिल्ली में जाइए तो लाखों खर्च हो जाते हैं। तो वह तो स्वर्ग है, वहां करोड़ों रुपये खर्च हो जाएंगे। चपरासी भी वहां करोड़ों से नीचे की बात नहीं करता है।

उस राजा ने कहा, धोखा देने की कोशिश तो नहीं कर रहे हो?

उस आदमी ने कहा कि सम्राटों को धोखा देना मुश्किल है, क्योंकि उनसे बड़े धोखेबाज जमीन पर दूसरे नहीं हो सकते। उनको क्या धोखा दिया जा सकता है? डाकुओं को क्या लूटा जा सकता है? हत्यारों की क्या हत्या की जा सकती है? मैं निरीह आदमी, आपको क्या धोखा दूंगा? और फिर चाहें तो आप पहरा लगा दें, मुझे एक महल के भीतर बंद कर दें। मैं महल के भीतर ही रहूंगा। क्योंकि देवताओं के वहां जाने का रास्ता आंतरिक है, इसलिए बाहर की कोई यात्रा नहीं करनी है। लेकिन करोड़ों रुपये खर्च होंगे और छह महीने लग जाएंगे।

राजा ने कहा, छह महीने! मैं तो सोचता था, तू दिन, दो दिन में ले आएगा।

उसने कहा कि दिन, दो दिन में तो दिल्ली में फाइल नहीं सरकती, तो स्वर्ग में क्या इतना आसान है आप समझते हैं? कोशिश मैं अपनी करूंगा।

राजा ने कहा, ठीक है।

दरबारियों ने कहा, यह आदमी धोखेबाज मालूम पड़ता है। देवताओं के वस्त्र कभी सुने हैं आपने?

राजा ने कहा, लेकिन धोखा देकर यह जाएगा कहां?

नंगी तलवारों का पहरा लगा दिया और उस आदमी को महल में बंद कर दिया। वह रोज कभी करोड़, कभी दो करोड़ रुपये मांगने लगा। छह महीने में उसने अरबों रुपये मांग लिए। लेकिन राजा ने कहा, कोई फिक्र नहीं। जाएगा कहां?

ठीक छह महीने पूरे हुए। वह आदमी पेटी लेकर बाहर आ गया। उसने सैनिकों से कहा, मैं कपड़े ले आया हूं, चलें महल की तरफ। तब तो शक की कोई बात न रही। सारी राजधानी महल के द्वार पर इकट्ठी हो गई। दूर-दूर से लोग देखने आ गए थे। दूर-दूर से राजे बुलाए गए थे, सेनापति बुलाए गए थे, बड़े लोग बुलाए गए थे, धनपति बुलाए गए थे। दरबार ऐसा सजा था, जैसा कभी न सजा होगा। वह आदमी पेटी लेकर जब उपस्थित हुआ, तो राजा की हिम्मत में हिम्मत आई। अभी तक डरा हुआ था कि अगर बेईमान न हुआ और पागल हुआ, तो भी हम क्या करेंगे? अगर उसने कह दिया कि नहीं मिलते! लेकिन वह पेटी लेकर आ गया तो विश्वास आ गया।

उस आदमी ने आकर पेटी रखी और कहा, महाराज, वस्त्र ले आया हूं। आ जाएं आप, अपने वस्त्र छोड़ दें, मैं आपको देवताओं के वस्त्र देता हूं। पगड़ी लेकर राजा की उसने पेटी के भीतर डाल दी, पेटी के भीतर से हाथ अंदर निकाल कर बाहर लाया, हाथ बिलकुल खाली था। और उसने कहा, यह सम्हालिए देवताओं की पगड़ी। दिखाई पड़ती है न आपको? क्योंकि देवताओं ने चलते वक्त कहा था: ये कपड़े उन्हीं को दिखाई पड़ेंगे, जो अपने बाप से पैदा हुए हों।

पगड़ी थी नहीं, दिखाई बिलकुल नहीं पड़ती थी, लेकिन एकदम दिखाई पड़ने लगी!

उस सम्राट ने कहा, क्यों नहीं दिखाई पड़ती!

सम्राट लेकिन मन में सोचा कि मेरा बाप धोखा दे गया है, पगड़ी दिखाई

तो नहीं पड़ती है! लेकिन वह भीतर की बात अब भीतर ही रखनी उचित थी।

दरबारियों ने भी देखा, गर्दनें बहुत ऊपर उठाईं, आंखें साफ कीं, लेकिन पगड़ी नहीं थी। लेकिन सबको दिखाई पड़ने लगी! सब दरबारी आगे बढ़ कर कहने लगे, महाराज, ऐसी पगड़ी कभी देखी न थी। कोई पीछे रह जाए तो कोई यह न समझ ले कि इसको दिखाई नहीं पड़ती, तो सब एक-दूसरे के आगे होने लगे, जोर-जोर से कहने लगे, कि कहीं धीरे कहो तो किसी को और यह शक न हो जाए कि यह आदमी धीरे बोल रहा है, कहीं ऐसा तो नहीं है कि इसको दिखाई न पड़ती हो।

जब सम्राट ने देखा कि सब दरबारियों को दिखाई पड़ती है, तो उसने सोचा, दिखाई ही पड़ती होगी, जब इतने लोगों को दिखाई पड़ रही है।

फिर हर एक ने यही सोचा कि मैं ही कुछ गड़बड़ में हूं, भीड़ को दिखाई पड़ रही है।

पगड़ी पहन ली। कोट पहन लिया, जो नहीं था। कमीज पहन ली, जो नहीं थी। फिर धोती भी निकल गई। फिर आखिरी वस्त्र के निकलने की नौबत आ गई। तब राजा घबड़ाया कि कहीं कुछ धोखा तो नहीं है, अन्यथा मैं नंगा खड़ा हो जाऊंगा! डरने लगा।

तो उस आदमी ने कहा, झिझकिए मत महाराज, नहीं तो लोगों को शक हो जाएगा। जल्दी से निकाल दीजिए!

झूठ की यात्रा बड़ी खतरनाक है। पहले कदम पर कोई रुक जाए तो रुक जाए, फिर बाद में रुकना बहुत मुश्किल होता है।

अब उसने भी सोचा कि इतनी दूर चल ही आए, और अब इनकार करना, तो आधे नंगे भी हो गए और पिता भी गए, बहुत गड़बड़ है। अब जो कुछ होगा, होगा। उसने हिम्मत करके आखिरी कपड़ा भी निकाल दिया। लेकिन सारा दरबार कह रहा था कि महाराज धन्य! अदभुत वस्त्र हैं, दिव्य वस्त्र हैं! तो उसे हिम्मत थी कि कोई फिक्र नहीं, नंगा मुझे खुद ही पता चल रहा है। तो अपना नंगापन तो अपने को पता रहता ही है। इसलिए इसमें कोई हर्जा भी नहीं है ज्यादा। चलेगा।

लेकिन उस बेईमान आदमी ने, जो ये वस्त्र लाया था देवताओं के...।

और देवताओं से वस्त्र लाने वाले और देवताओं की खबर लाने वाले

और देवताओं तक पहुंचाने वाले लोग, सब बेईमान होते हैं। सबसे सावधान रहना। इधर आदमी तक पहुंचना मुश्किल है, देवताओं तक पहुंचना आसान है! आदमी को समझना मुश्किल है, और स्वर्ग के नक्शे बनाए हुए बैठे हैं! बड़ौदा की ज्योग्राफी का जिनको पता नहीं, वे स्वर्ग और नरक के नक्शे बनाए बैठे हुए हैं!

उस आदमी ने कहा कि महाराज, देवताओं ने चलते वक्त कहा था, पहली दफे पृथ्वी पर जा रहे हैं ये वस्त्र, इनकी शोभायात्रा नगर में निकलनी बहुत जरूरी है। रथ तैयार है। अब आप चल कर रथ पर सवार हो जाइए। लाखों-लाखों जन भीड़ लगाए खड़े हैं, उनकी आंखें तरस रही हैं, वस्त्रों को देखना है।

राजा ने कहा, क्या कहा? अब तक महल के भीतर थे, अपने ही लोग थे। महल के बाहर, सड़कों पर?

लेकिन उस आदमी ने धीरे से कहा, घबड़ाइए मत, जिस तरकीब से यहां सबको वस्त्र दिखाई पड़ रहे हैं, उसी तरकीब से वहां भी सबको दिखाई पड़ेंगे। आपके रथ के पहले यह डुंडी पीट दी जाएगी सारे नगर में कि ये वस्त्र उसी को दिखाई पड़ते हैं जो अपने बाप से पैदा हुआ है। आप घबड़ाइए मत। अब जो हो गया, हो गया। अब चलिए।

राजा समझ तो गया कि वह बिलकुल नंगा है और किसी को वस्त्र दिखाई नहीं पड़ रहे हैं, लेकिन अब कोई भी अर्थ न था। जाकर बैठ गया रथ पर। स्वर्ण-सिंहासन रथ पर लगा था। नंगा राजा, स्वर्ण-सिंहासन पर!

स्वर्ण-सिंहासनों पर नंगे लोग ही बैठे हैं। जिनकी शोभायात्राएं निकल रही हैं, नंगे लोगों की ही हैं।

लेकिन नगर के लाखों लोगों को बस एकदम वस्त्र दिखाई पड़ने लगे! वही लोग जो महल के भीतर थे, वही महल के बाहर भी हैं। वही आदमी, वही भीड़ वाला आदमी। सब वस्त्रों की प्रशंसा करने लगे। कौन झंझट में पड़े! जब सारी भीड़ को दिखाई पड़ता है तो व्यक्ति की हैसियत से अपने को कौन इनकार करे! कौन कहे कि मुझे दिखाई नहीं पड़ता! इतना बल जुटाने के लिए बड़ी आत्मा चाहिए। इतना बल जुटाने के लिए बड़ा धार्मिक व्यक्ति चाहिए, इतना बल जुटाने के लिए परमात्मा की आवाज चाहिए। कौन इतनी हिम्मत जुटाए?

इतनी बड़ी भीड़! फिर मन में यह भी शक होता है कि जब इतने लोग कहते हैं, तो ठीक ही कहते होंगे। इतने लोग गलत क्यों कहेंगे?

लेकिन कोई भी यह नहीं सोचता कि ये इतने लोग अलग-अलग उतनी ही हैसियत के हैं, जितनी हैसियत का मैं हूं। ये इतने लोग इकट्ठे नहीं हैं, ये एक-एक आदमी ही हैं आखिर में, मेरे ही जैसा। जैसा मैं कमजोर हूं, वैसा ही यह कमजोर है। यह भी भीड़ से डर रहा है, मैं भी भीड़ से डर रहा हूं।

जिससे हम डर रहे हैं, वह कहीं है ही नहीं। एक-एक आदमी का समूह खड़ा हुआ है, और सब भीड़ से डर रहे हैं।

लोग अपने बच्चों को घर ही छोड़ आए थे, लाए नहीं थे भीड़ में। क्योंकि बच्चों का कोई विश्वास नहीं। कोई बच्चा कहने लगे कि राजा नंगा है! तो बच्चों का क्या विश्वास है? बच्चों को बिगाड़ने में वक्त लग जाता है। स्कूल, कालेज, युनिवर्सिटी, सब इंतजाम करो, फिर भी बड़ी मुश्किल से बिगाड़ पाते हो। एकदम आसान नहीं है बिगाड़ देना।

छोटे-छोटे बच्चों को कोई नहीं लाया था। लेकिन कुछ बच्चे जोरदार थे। और कुछ बच्चे ऐसे थे जिनकी माताओं की वजह से पिताओं को उनसे डरना पड़ता था, उनको लाना पड़ा था। वे कंधों पर सवार होकर आ गए थे। उन बच्चों ने देखते ही से कहा, अरे! राजा नंगा है!

उनके बाप ने कहा, चुप नादान! अभी तुझे अनुभव नहीं है, इसलिए नंगा दिखाई पड़ता है। ये बातें बड़े गहरे अनुभव की हैं, अनुभवियों को दिखाई पड़ती हैं। जब उम्र तेरी बढ़ेगी, तुझको भी दिखाई पड़ने लगेंगी। यह उम्र से आता है ज्ञान।

उम्र से दुनिया में कोई ज्ञान कभी नहीं आता। उम्र के भरोसे मत बैठे रहना। उम्र से बेईमानी आती है, चालाकी आती है, कनिंगनेस आती है; उम्र से ज्ञान कभी नहीं आता। लेकिन सब चालाक लोग यह कहते हैं कि उम्र से ज्ञान आता है।

फिर बेटे कहने लगे कि आप कहते हैं कि...आपको दिखाई पड़ रहे हैं वस्त्र?

हां, हमें दिखाई पड़ रहे हैं, उनके पिताओं ने कहा, बिलकुल दिखाई पड़ रहे हैं। हम अपने ही बाप से पैदा हुए हैं, ऐसा कैसे हो सकता है कि हमको दिखाई न पड़ें! और तुम अभी बच्चे हो, नासमझ हो, भोले हो; अभी तुम्हें समझ नहीं आ रहा है।

जिन बच्चों को सत्य दिखाई पड़ा था, उन्हें भीड़ के भय का कोई पता नहीं

था, इसीलिए दिखाई पड़ा था। बड़े होंगे, भीड़ से भयभीत हो जाएंगे। फिर उनको भी वस्त्र दिखाई पड़ने लगते हैं। यह भीड़ डराए हुए है चारों तरफ से एक-एक आदमी को।

इसलिए जीसस ने कहा है...एक बाजार में वे खड़े थे। कुछ लोग उनसे पूछने लगे कि तुम्हारे स्वर्ग के राज्य में, तुम्हारे परमात्मा के दर्शन को कौन उपलब्ध हो सकता है? तो जीसस ने चारों तरफ नजर दौड़ाई, और एक छोटे से बच्चे को उठा कर ऊपर कर लिया और कहा कि जो इस बच्चे की तरह है।

क्या मतलब रहा होगा? क्या साइज छोटी होगी तो ईश्वर के राज्य में चले जाइएगा? कि उम्र कम होगी तो ईश्वर के राज्य में चले जाइएगा? नहीं! क्या बच्चे मर जाएंगे तो सब ईश्वर के राज्य में चले जाएंगे? नहीं! लेकिन बच्चों की तरह होंगे, इसका मतलब है, जो भीड़ से भयभीत नहीं। जो सीधे और साफ हैं। जिन्हें जो दिखता है, वही कहते हैं कि दिखता है। जिन्हें जो नहीं दिखता, कहते हैं कि नहीं दिखता है। जो झूठ को मान लेने को राजी नहीं। जो बच्चों की तरह होंगे, वे। बच्चे नहीं, बच्चों की तरह!

बच्चों की तरह का मतलब?

बच्चे अकेले हैं, बच्चे इंडिविजुअल हैं। बच्चों को भीड़ से कोई मतलब नहीं है। अभी भीड़ की उन्हें फिक्र नहीं है। अभी भीड़ का उन्हें पता भी नहीं है कि भीड़ भी है। और भीड़ बड़ी अदभुत चीज है। उसकी बड़ी अनजानी ताकत चारों तरफ से जकड़े हुए है आदमी को।

दमन करने वाला चित्त

दमन भूल कर मत करना। क्योंकि दमन अच्छी चीजों का तो कोई करता नहीं है, दमन करता है बुरी चीजों का। और जिनका दमन करता है, जिनसे लड़ता है, उन्हीं से गठबंधन हो जाता है, उन्हीं के साथ फेरा पड़ जाता है। जिस चीज को हम दबाते हैं, उसी से जकड़ जाते हैं।

मैंने सुना है, एक होटल में एक रात एक आदमी मेहमान हुआ। लेकिन होटल के मैनेजर ने कहा, जगह नहीं है, आप कहीं और चले जाएं। एक ही कमरा खाली है और वह हम देना नहीं चाहते। उसके नीचे एक सज्जन ठहरे हुए हैं। अगर ऊपर जरा ही खड़बड़ हो जाए, आवाज हो जाए, कोई जोर से चल दे, तो उनसे झगड़ा हो जाता है। तो जब से उसको पिछले मेहमान ने खाली किया है, हमने तय किया है कि अब खाली ही रखेंगे, जब तक नीचे के सज्जन विदा नहीं ले लेते।

कुछ सज्जन ऐसे होते हैं जिनके आने की राह देखनी पड़ती है, कुछ सज्जन ऐसे होते हैं जिनके जाने की भी राह देखनी पड़ती है। और दूसरी तरह के ही सज्जन ज्यादा होते हैं; पहली तरह के सज्जन तो बहुत मुश्किल हैं, जिनके आने की राह देखनी पड़ती है।

उस मैनेजर ने कहा कि क्षमा करिए, हम उनके जाने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। जब वे चले जाएं, तब आप आइए।

उस आदमी ने कहा, आप घबड़ाएं न, मैं सिर्फ दो-चार घंटे ही रात सोऊंगा। दिन भर बाजार में काम करना है, रात दो बजे लौटूंगा, सो जाऊंगा। सुबह छह बजे उठ कर मुझे गाड़ी पकड़ लेनी है। अब नींद में उनसे कोई झगड़ा होगा, इसकी आशा नहीं है। नींद में चलने की मेरी आदत भी नहीं है। और कोई गड़बड़ नहीं है, मैं सो जाऊंगा, आप फिक्र न करें।

मैनेजर मान गया। वह आदमी दो बजे रात लौटा, थका-मांदा दिन भर के काम के बाद। बिस्तर पर बैठ कर उसने जूता खोल कर नीचे पटका। तब उसे

खयाल आया कि कहीं नीचे के मेहमान की जूते की आवाज से नींद न खुल जाए! तो उसने दूसरा जूता धीरे से निकाल कर रख कर वह सो गया।

घंटे भर बाद नीचे के मेहमान ने दस्तक दी–कि सज्जन, दरवाजा खोलिए!

वह बहुत हैरान हुआ कि घंटा भर मेरी नींद भी हो चुकी, अब क्या गलती हो गई होगी? दरवाजा खोला डरा हुआ। उस आदमी ने पूछा कि दूसरा जूता कहां है? मुझे बहुत मुश्किल में डाल दिया। जब पहला जूता गिरा, मैंने समझा कि अच्छा, महाशय आ गए। फिर दूसरा जूता गिरा ही नहीं! अब मैं प्रतीक्षा कर रहा हूं कि दूसरा जूता अब गिरे, अब गिरे। फिर मैंने अपने मन को समझाया–मुझे किसी के जूते से क्या लेना-देना? हटाओ, कुछ भी हो! लेकिन जितना मैंने हटाने की कोशिश की, दूसरा जूता मेरी आंखों में झूलने लगा। आंख बंद करता हूं, जूता लटका दिखता है। आंख खोलता हूं...! बड़ी बेचैनी हो गई, नींद आनी मुश्किल हो गई। धक्का देने लगा। बहुत समझाया कि कैसा पागल है तू! किसी के जूते से अपने को क्या मतलब! चाहे एक जूता पहन कर सो रहा हो, सोने दो। जो चाहे, करने दो उसे। लेकिन जितना मैंने मन को समझाया, दबाया, लड़ा, उतना ही वह जूता बड़ा होता गया और सिर पर घूमने लगा।

अपनी-अपनी खोपड़ी की तलाश अगर आदमी करे, तो पाएगा कि दूसरों के जूते वहां घूम रहे हैं, जिनसे कुछ लेना-देना नहीं है। लड़े, कि खतरा हुआ।

उस आदमी ने कहा, क्षमा करिए! इसलिए मैं पूछने आया, पता चल जाए तो मैं सो जाऊं शांति से, यह झगड़ा बंद हो।

जो उस आदमी के साथ हुआ, वह सबके साथ होगा।

सप्रेसिव माइंड, दमन करने वाला चित्त हमेशा व्यर्थ की बातों में उलझ जाता है।

सेक्स को दबाओ, और चौबीस घंटे सेक्स का जूता सिर पर घूमने लगेगा। क्रोध को दबाओ, और चौबीस घंटे क्रोध प्राणों में घुस कर चक्कर काटने लगेगा। और एक तरफ से दबाओ, और दूसरी तरफ से निकलने की चेश होगी। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति एक ऊर्जा है, एनर्जी है। आप दबाओगे एनर्जी को तो वह कहीं से निकलेगी। एक झरने को आप इधर से दबा दो, वह दूसरी तरफ से फूट कर बहेगा। उधर से दबाओ, तीसरी तरफ से बहेगा। झरना है, तो दबाने से काम नहीं हो सकता।

एक आदमी दफ्तर में है। उसका मालिक कुछ बेहूदी बातें कह दे। और मालिक बेहूदी बातें कहते हैं; नहीं तो मालिक होने का मजा ही खत्म।

मजा क्या है मालिक होने में? किसी से बेहूदी बातें कह सकते हो, और वह आदमी यह भी नहीं कह सकता कि आप बेहूदी बातें कह रहे हैं। और फिर मालिक बेहूदी बातें कहे या न कहे, नौकर को मालिक की सब बातें बेहूदी मालूम पड़ती हैं। नौकर होना ही इतनी बेहूदगी है कि अब और जो भी कुछ कहा जाए वह बेहूदगी मालूम पड़ती है।

अगर मालिक या बॉस जोर से बोलता है, क्रोध की बातें कहता है, तो भी नौकर को खड़े होकर मुस्कुराना पड़ता है। भीतर आग लग रही है कि गर्दन दबा दें! ऐसा कौन नौकर होगा जिसको मालिक की गर्दन दबाने का खयाल न आता हो? आता है, जरूर आता है। आना भी चाहिए, नहीं तो दुनिया बदलेगी भी नहीं! मगर ऊपर से मुस्कुराहट, ओंठ फैला देगा छह इंच और कहेगा कि बड़ी अच्छी बातें कह रहे हैं। बड़े वेद-वचन बोल रहे हैं। बड़ी वाणी आपकी मधुर है। उपनिषद के ऋषि भी क्या बोलते होंगे ऐसी बातें! धन्यभाग कि आपके अमृत-वचन मेरे ऊपर गिरे!

भीतर आग जल रही है। दबा लेगा अपने क्रोध को। लेकिन क्रोध को दबा कर कितनी देर चल सकते हो? साइकिल चलाएगा तो पैडल जोर से चलेगा। कार ड्राइव करेगा तो कार एकदम साठ से सौ पर भागने लगेगी। वह जो क्रोध दबाया है, वह सब तरफ से निकलने की कोशिश करेगा।

अमेरिका के मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि अगर आदमी के क्रोध की कोई समझ पैदा हो सके, तो अमेरिका के एक्सीडेंट पचास प्रतिशत कम हो जाएंगे। वे जो एक्सीडेंट हो रहे हैं, वे सड़क की वजह से कम हो रहे हैं, दिमाग की वजह से ज्यादा हो रहे हैं।

आपको पता है, जब क्रोध में साइकिल चलाते हैं तो किस तरह चलती है साइकिल? एकदम हवा लग जाती है उसे! फिर कोई नहीं दिखता। ऐसा मालूम पड़ता है—रास्ता खाली है एकदम। और सामने कोई आ जाए तो और ऐसा मन होता है कि टकरा दूं जोर से; क्योंकि वह भीतर जो टकराहट चल रही है।

वह आदमी तेजी से साइकिल चलाता हुआ घर पहुंचेगा। रास्ते में दो-चार बार बचेगा टकराने से। क्रोध और भारी हो जाएगा। अब जाकर वह घर प्रतीक्षा करेगा कि कोई मौका मिल जाए और पत्नी की गर्दन दबा ले।

पत्नी बड़ी सरल चीज है। वह है ही इसलिए कि आप घर आइए और

उसकी गर्दन दबाइए। उसका मतलब क्या है? उसका उपयोग क्या है और? उसका असली उपयोग यह है कि जिंदगी भर का जो कुछ आपके ऊपर गुजरे, वह जाकर पत्नी पर रिलीज करिए। उसको निकालिए वहां पर।

घर पहुंचते से ही सब गड़बड़ी दिखाई पड़ने लगेगी। पत्नी जिसको कल रात ही आपने कहा था कि तू बड़ी सुंदर है, एकदम मालूम पड़ेगी कि यह शूर्पणखा कहां से आ गई? सब खत्म हो जाएगा। फिल्म की अभिनेत्रियां याद आएंगी कि सौंदर्य उसको कहते हैं। यह औरत? रोटी जली हुई मालूम पड़ेगी। सब्जी में नमक नहीं मालूम पड़ेगा। सब गड़बड़ मालूम पड़ेगा। घर अस्तव्यस्त घूमता हुआ मालूम पड़ेगा। टूट पड़ेंगे उस पर।

कल भी रोटी ऐसी ही थी; क्योंकि कल भी पत्नी यही थी। कल भी पत्नी यही थी जो आज है; लेकिन आज सब बदला हुआ मालूम पड़ेगा। वह जो भीतर दबाया है, वह निकलने के लिए मार्ग खोज रहा है। और ध्यान रहे, जैसे पानी ऊपर की तरफ नहीं चढ़ता, ऐसे क्रोध भी ऊपर की तरफ नहीं चढ़ता। पानी भी नीचे की तरफ उतरता है, क्रोध भी नीचे की तरफ उतरता है। कमजोर की तरफ उतरता है, ताकतवर की तरफ नहीं उतरता। मालिक की तरफ नहीं चढ़ सकता है क्रोध। चढ़ाना हो तो बड़े पंप लगाना जरूरी है। कम्युनिज्म वगैरह के पंप लगाओ, तब चढ़ सकता है मालिक की तरफ; नहीं तो नहीं चढ़ता। पत्नी की तरफ एकदम उतर जाता है। और पत्नी कुछ भी नहीं कर सकती, क्योंकि पति परमात्मा है।

ये पति लोग ही समझा रहे हैं पत्नियों को कि हम परमात्मा हैं। बड़े मजे की बातें दुनिया में चल रही हैं! और कोई स्त्री नहीं कहती कि महाशय, आप और परमात्मा? आप ही परमात्मा हैं? तो परमात्मा पर भी शक पैदा हो जाएगा अगर आप ही परमात्मा हैं! आपकी इज्जत नहीं बढ़ती परमात्मा होने से, परमात्मा की इज्जत घटती है आपके होने से। कृपा करके परमात्मा को बाइज्जत जीने दो, आप परमात्मा मत बनो।

सूक्ष्म उलझनें

मैं एक संन्यासी के पास था। वे संन्यासी मुझसे बार-बार कहने लगे...। और संन्यासियों के पास बेचारों के पास और कुछ कहने को होता ही नहीं। धनपति के पास जाइए, तो वह अपने धन का हिसाब बताता है कि इतने करोड़ थे, अब इतने करोड़ हो गए; मकान तिमंजिला था, सात मंजिला हो गया। पंडितों के पास जाइए तो वे अपना बताते हैं कि अभी एम.ए. थे, अब पीएच.डी. भी हो गए, अब डी.लिट. भी हो गए; अब यह हो गए, वह हो गए! पांच किताबें छपी थीं, अब पंद्रह छप गईं! वे अपना बताएंगे। त्यागी संन्यासी क्या बताए? वह भी अपना हिसाब रखता है त्याग का!

वे मुझसे रोज-रोज कहने लगे, मैंने लाखों रुपयों पर लात मार दी!

वे सत्य ही कहते होंगे। चलते वक्त मैंने पूछा कि महाराज, यह लात मारी कब? कहने लगे, कोई पैंतीस साल हो गए। मैंने कहा, लात ठीक से लग नहीं पाई, नहीं तो पैंतीस साल तक याद रखने की क्या जरूरत है? पैंतीस साल बहुत लंबा वक्त है। और बेचारी लात मार दी, मार दी, खत्म करो! अब इसे पैंतीस साल याद रखने की क्या जरूरत है?

लेकिन वे अखबार की कटिंग रखे हुए थे अपनी फाइल में, जिसमें छपी थी पैंतीस साल पहले यह खबर। कागज पुराने पड़ गए थे, पीले पड़ गए थे, लेकिन मन को बड़ी राहत देते होंगे। दिखाते-दिखाते गंदे हो गए थे, अक्षर समझ में नहीं आते थे। लेकिन उनको तृप्ति हो जाती होगी—पैंतीस साल पहले उन्होंने लाखों रुपयों पर लात मारी।

मैंने उनसे कहा, लात ठीक से लग जाती तो रुपये भूल जाते। लात ठीक से लगी नहीं। लात लौट कर वापस आ गई। पहले अकड़ रही होगी कि मेरे पास लाखों रुपये हैं। अहंकार रहा होगा। सड़क पर चलते होंगे तो भोजन की कोई जरूरत न रही होगी, बिना भोजन के भी चल जाते होंगे। ताकत, गर्मी रही होगी भीतर—लाखों रुपये मेरे पास हैं! फिर लाखों को छोड़ दिया, तब से अकड़ दूसरी आ गई होगी कि मैंने लाखों पर लात मार दी! मैं कोई साधारण आदमी हूं? और पहली अकड़ से दूसरी अकड़ ज्यादा खतरनाक है। पहले अहंकार से

दूसरा अहंकार ज्यादा सूक्ष्म है। दबाया हुआ अहंकार वापस लौट आया है। अब वह और बारीक होकर आया है कि तुम पहचान न जाना।

जो भी आदमी चित्त के साथ दमन करता है, वह सूक्ष्म से सूक्ष्म उलझनों में उलझता चला जाता है। दमन से सावधान रहना! दमन करने वाला आदमी रुग्ण हो जाता है, अस्वस्थ हो जाता है, बीमार हो जाता है। और दमन का अंतिम परिणाम विक्षिप्तता है, मैडनेस है।

होश भरा आदमी

बुद्ध एक गांव से गुजरते थे। कुछ लोगों ने भीड़ लगा ली और बहुत गालियां दीं बुद्ध को।

अच्छे लोगों को हमने सिवाय गालियां देने के आज तक कुछ भी नहीं किया। हां, जब वे मर जाते हैं तो पूजा वगैरह भी करते हैं। लेकिन वह मरने के बाद की बात है। जिंदा बुद्ध को तो गाली देनी ही पड़ेगी। क्योंकि ऐसे लोग थोड़े डिस्टरबिंग होते हैं; थोड़ी गड़बड़ कर देते हैं; नींद तोड़ देते हैं। तो गुस्सा आता है तो आदमी गाली देता है, कसूर भी क्या है!

उस गांव के लोगों ने घेर कर बुद्ध को बहुत गालियां दीं। बुद्ध ने उनसे कहा कि मित्रो, तुम्हारी बात अगर पूरी हो गई हो तो अब मैं जाऊं, मुझे दूसरे गांव जल्दी पहुंचना है।

वे लोग कहने लगे, बात? हम गालियां दे रहे हैं सीधी-सीधी, समझ नहीं आतीं आपको! क्या बुद्धि बिलकुल खो दी है? सीधी-सीधी गालियां दे रहे हैं, बात नहीं कर रहे हैं।

बुद्ध ने कहा, तुम गालियां दे रहे हो, वह मैं समझ गया। लेकिन मैंने गालियां लेना बंद कर दिया है। तुम्हारे देने से क्या होगा जब तक मैं लूं न? और मैं ले नहीं सकता। क्योंकि जब से जाग गया हूं, तब से गाली लेना असंभव हो गया है। जागते में कोई गलत चीज कैसे ले सकता है?

आप बेहोशी में चलते हों तो पैर में कांटा गड़ जाता है; सड़क को देख कर चलते हों तो कैसे कांटा गड़ सकता है! गलती से आदमी दीवाल से टकरा

सकता है; लेकिन आंखें खुली हों तो दरवाजे से निकलता है।

बुद्ध ने कहा कि मैं आंखें खोल कर जब से जीने लगा हूं, जाग कर, तब से गालियां लेने का मन ही नहीं करता है। अब मैं बड़ी मुश्किल में पड़ गया। तुम्हें दस साल पहले आना चाहिए था। तुम जरा देर करके आए। दस साल पहले आते तो मजा आ जाता। तुमको मजा आ जाता, हमको तो बहुत तकलीफ होती। हमको तो अभी मजा आ रहा है। लेकिन तुम्हें बहुत मजा आ जाता; क्योंकि मैं भी दुगने वजन की गाली तुम्हें देता। लेकिन अब बड़ी मुश्किल है; होश से भरा हुआ आदमी गाली नहीं ले सकता। तो मैं जाऊं?

वे लोग बड़े हैरान हो गए।

बुद्ध ने कहा, जाते वक्त एक बात और तुमसे कह दूं। पिछले गांव में कुछ लोग मिठाइयां लेकर आए थे। मैंने कहा कि मेरा पेट भरा है। वह भी जागा हुआ था, इसलिए कह सका; क्योंकि सोया हुआ आदमी मिठाइयां देख कर भूल जाता है कि पेट भरा है।

पता है आपको? बेहोश आदमी भूख देख कर नहीं खाता; बेहोश आदमी चीजें देख कर खाता है। होश भरा आदमी पेट की भूख देख कर खाता है। बात खतम हो गई।

बुद्ध ने कहा, मेरा पेट भरा था। वह भी होश की वजह से। दस साल पहले वे भी आए होते, तो उनकी थालियां उन्हें वापस न ले जानी पड़तीं। मैं उनको जरूर खा लेता। लेकिन जब से होश आ गया है, जाग कर देखता रहता हूं। तो गलती करनी बहुत मुश्किल हो गई है। वे बेचारे थालियां वापस ले गए। तो मैं तुमसे पूछता हूं, दोस्तो, उन्होंने उन मिठाइयों का क्या किया होगा?

उस गाली देने वाली भीड़ में से एक आदमी ने कहा, क्या किया होगा? घर में जाकर मिठाइयां बांट दी होंगी।

बुद्ध ने कहा, यही मुझे चिंता हो रही है कि तुम क्या करोगे? तुम गालियों की थालियां लेकर आए हो, और मैं लेता नहीं। अब तुम इन गालियों का क्या करोगे? किसको बांटोगे?

बुद्ध कहने लगे, मुझे बड़ी दया आती है तुम पर। अब तुम करोगे क्या? इन गालियों का क्या करोगे? मैं लेता नहीं; मैं ले सकता नहीं। चाहूं भी तो नहीं ले सकता, मुश्किल में पड़ गया हूं, जाग जो गया हूं।

कोई आदमी जाग कर क्रोध नहीं कर सकता।

दमन निद्रा में चलता है, जाग्रत आदमी को दमन की कोई जरूरत नहीं है।

बस इतना ही थोड़ी सी समझ की जरूरत है जीवन के प्रति।

जीवन छोटे से राजों पर निर्भर होता है। और बड़े से बड़ा राज यह है कि सोया हुआ आदमी भटकता चला जाता है चक्कर में, जागा हुआ आदमी चक्कर के बाहर हो जाता है।

जागने की कोशिश ही धर्म की प्रक्रिया है।

जागने का मार्ग ही योग है।

जागने की विधि का नाम ही ध्यान है।

जागना ही एकमात्र प्रार्थना है।

जागना ही एकमात्र उपासना है।

जो जागते हैं, वे प्रभु के मंदिर को उपलब्ध हो जाते हैं।

नास्तिकता और धार्मिकता का मापदंड

एक फकीर था। उस पर गांव में लोगों ने इल्जाम लगा दिया है और कह दिया है राजा से कि यह फकीर नास्तिक है, अधार्मिक है, और इसके बोलने पर पाबंदी लगाना जरूरी है, नहीं तो सारा गांव बर्बाद हो जाएगा। तो राजा ने उस फकीर को बुला लिया, उस फकीर ने राजा से कहा कि किसने तुम्हें यह खबर दी? क्योंकि मुझे पता ही नहीं कि नास्तिकता और धार्मिकता तौलने का मापदंड क्या है? मैं तो उसी की खोज कर रहा हूं। मुझे पता चल जाए, तो मैं भी उस तराजू पर बैठकर अपने को तौल लूं कि मैं धार्मिक हूं कि अधार्मिक। कहां किसने? राजा ने कहा कि मेरे ये पंडित बैठे हैं। इन्होंने कहा है। उसने कहा कि इन पंडितों से, इसके पहले कि मैं अपनी जांच करवाऊं, एक छोटा सा सवाल पूछना है।

पंडित तैयार हो गए। ऐसे पंडित हमेशा तैयार होते ही हैं, रेडीमेड ही होते हैं। उनके पास कुछ ऐसा नहीं होता है कि किसी चीज का मुकाबला किया

जा सके। उनके पास चीजें तैयार होती हैं। मुकाबला सिर्फ बहाना होता है, खूंटियां होती हैं, जिन पर जो उनके दिमाग में सदा से तैयार कर रखा है, वह टांग देते हैं। वे तैयार हो गए। उस फकीर ने एक-एक कागज उनको थमा दिया, और कहा कि मैं एक प्रश्न पूछता हूं, आप सब उत्तर लिख दें। तो उन्होंने सोचा कि यह कोई कठिन प्रश्न पूछेगा। और मजा यह है कि सब कठिन प्रश्नों के उत्तर तैयार हैं। सरल प्रश्न का उत्तर ही मुश्किल बात है। क्योंकि उसका उत्तर कहीं लिखा नहीं होता है। उस फकीर ने बड़ा सरल प्रश्न पूछा। उसने पूछा, व्हाट इज ब्रेड–रोटी क्या है? उन्होंने सोचा कि पूछेगा, ब्रह्म क्या है? और परमात्मा क्या है? मोक्ष क्या है? प्रेम क्या है? यह कैसा गंवार आदमी आ गया है, जो पूछता है कि रोटी क्या है? यह भी कोई सवाल है? कोई ज्ञान है?

उन्होंने कहा, यह भी कोई सवाल है? फकीर ने कहा, मैं बिलकुल नासमझ आदमी हूं, बस ऐसा ही सरल पूछ सकता हूं। आपकी बड़ी कृपा होगी, जवाब दे दें। आप इस पर लिख दें, राजा भी हैरान हुआ, इसको काहे के लिए पकड़ लाए हैं? यह क्या नास्तिक होगा? यह बेचारा, ऐसी सरल बातें भी इसे अभी पता नहीं कि रोटी क्या है! इसके सवाल कोई मेटाफिजिक्स के, कोई ज्ञान के तो नहीं हैं। पंडित लिखने में बड़ी मुश्किल में पड़ गए; क्योंकि कहीं नहीं लिखा था कि रोटी क्या है! पढ़ा ही नहीं था किसी किताब में, किसी ब्रह्मसूत्र में, किसी गीता में, किसी कुरान में! कहीं नहीं लिखा है कि रोटी क्या है। बड़ी मुश्किल में पड़ गए।

एक ने लिखा, रोटी एक तरफ का भोजन है। और क्या लिखे। गेहूं, पानी और आग का जोड़ है। किसी ने लिखा है, रोटी बड़ी ताकतवर चीज है, यह कहना मुश्किल है, क्योंकि रोटी सब कुछ है। खून भी वही है, हड्डी भी वही है, मांस भी वही है,ज्म जा भी वही है। तो रोटी क्या है, कहना बहुत मुश्किल है। रोटी बहुत मिस्ट्री है। एक ने लिखा कि पहले यह पता चल जाए कि पूछनेवाले का मतलब क्या है, मैं बता सकता हूं।

सबके कागज लेकर फकीर राजा के सामने गया और उसने कहा, यह कागज देख लें। इन पंडितों को यह भी पता नहीं है कि रोटी क्या है? और ये सब इस पर भी राजी नहीं हैं कि रोटी क्या है? ये इस पर कैसे राजी होंगे कि ईश्वर क्या है, और आस्तिकता क्या है? इन्होंने कैसे जान लिया मुझे? वह पता मुझे बता दें

आप! मैं भी उस तराजू पर चढ़ जाऊंगा। अभी मुझे ही पता नहीं है कि मैं कौन हूं—नास्तिक हूं कि आस्तिक हूं। इनको कैसे पता लग गया है?

एक तरह की बुद्धिमत्ता उन पंडितों के पास भी थी। किताबों में जो लिखा था उसे वे जानते थे। यह आदमी बड़ा होशियार है। वह किताब की बात नहीं पूछेगा। यह आदमी भी एक तरह की बुद्धिमत्ता लिए हुए है, जो उससे गहरी है। इसके पास भी एक विजडम है। अक्सर होता है कि यहां कठिनाई है। हमें बुद्धिमान आदमी नहीं मिलता है; क्योंकि हमारी जो बुद्धिमत्ता है, हम उसी से तौलते चलते हैं। और दूसरी बात यह होती है जाने-अनजाने, जो हमसे सहमत हो जाए, वह बुद्धिमान मालूम पड़ता है, जो कि ठीक नहीं है। मुश्किल तो यह है कि जो बुद्धिमान है, वह सहमत जरा मुश्किल से हो सकेगा। और हमारा मन कहता है, जो सहमत हो जाए उसे हम बुद्धिमान मान लें। सरल है वह बात। लेकिन जरा कठिन है सहमति। यानी हमारी नजर में उसकी बुद्धिमत्ता हम सहमति से तौल लेते हैं। और जब कि बुद्धिमान आदमी का सहमत होना जरा मुश्किल है।

अपनी नजर है, अपनी दृष्टि है, अपना सोचना है। और, मैं यह मानता हूं कि कोई किसी से सहमत हो ही क्यों? असल में सहमति की अपेक्षा बहुत गहरे में वायलेंस है। अगर मैं आकांक्षा करूं कि मुझसे आपको सहमत होना चाहिए, तो मैं किसी न किसी गहरे तल पर आपको मिटाना चाहता हूं, और अपने को उसमें बैठाना चाहता हूं। आपको डोमिनेट करना चाहता हूं, मारना चाहता हूं।

शिष्यत्व

शिष्यत्व तो बहुत इनोसेंट और निर्दोष भाव है। वह बहुत अदभुत भाव है। सीखने की तैयारी है। इससे बड़ी सरलता और विनम्रता हो नहीं सकती।

एक मुसलमान फकीर था बायजीद। वह जब मरने के करीब है, तो उसके शिष्यों ने, मित्रों ने उससे पूछा कि आपने कहां से सीखा, कौन सा गुरु हैं? बायजीद ने कहा, अगर गुरु होता तो बहुत कम सीख पाता। गुरु

कोई न था, इसलिए बहुत सीख पाया। जो भी मिला, उसी से सीखा। और ऐसा भी नहीं था कि आदमियों से ही सीखा। दरख्त से सूखा पता गिर रहा था, तो उससे भी सीखा। कल यह पत्ता हरा था और आज सूखकर गिर गया और मैं रास्ते भर सोचता चला आया, उस गिरे हुए पत्ते को देखकर गिरना पड़ेगा। और उस पत्ते को मैंने नमस्कार कर लिया कि आज तू अच्छे वक्त पर गिर गया कि मैं निकलता था। तेरी बड़ी कृपा है। नहीं तो यह खयाल ही नहीं आता कि सूखा पत्ता कल हरा था, वह कितनी अकड़ और शान में था, फिर सूखकर गिर गया जब मैं गुजरता था। क्यों समझ में आयी है यह बात कि अभी हरे हैं, कल सूख जाएंगे।

बायजीद ने कहा, एक बार मैं एक गांव गया, रात के कोई बारह बज गए। मैं भटक गया रास्ता, तो गांव में कोई नहीं मिला। एक चोर मिला चोरी पर निकला था। मैंने उससे पूछा कि मित्र रास्ता बता सकोगे? मैं कहां जाऊं कहां ठहरूं? रात अंधेरी है, मुझे कुछ पता नहीं है! उस चोर ने कहा तुम साधु मालूम पड़ते हो। क्योंकि साधु होना ऊपर से दिख जाता है। लेकिन तुम्हें पता नहीं किससे पूछ रहे हो। मैं चोर हूं। और चोर होना ऊपर से कभी नहीं दिखता। वह तो भीतर होता है। तो तुम मुझे पहचान नहीं पाए हो। फिर भी मैं तुम्हें बता दूं कि मैं चोर हूं, अगर तुम्हारी मर्जी है तो तुम मेरे घर ठहर सकते हो। घर खाली है, और मैं रात भर तो बाहर रहूंगा।

बायजीद ने कहा अपने मित्रों से कि मैंने उस दिन पहली दफा जाना कि चोर की इतनी हिम्मत हो सकती है कि कह दे कि मैं चोर हूं, साधु इतनी हिम्मत से कह नहीं सकता कि मैं साधु हूं क्योंकि मेरे भीतर चोर मौजूद था, तभी वह कह सका कि मैं चोर हूं, नहीं तो कहना बहुत मुश्किल था। एकदम मुश्किल था। तो मैंने उसके पैर छू लिए। वह कहने लगा, यह आप क्या करते हैं? मैंने कहा कि मैं तेरे पैर छूता हूं। क्योंकि स्वयं को चोर कहने की हिम्मत सिर्फ साधु में होती है। चल, मैं तेरे घर चलता हूं।

मैं उसके घर गया। वह मुझे सुलाकर चला गया। वह पांच बचे के करीब लौटा। नींद खुली तो मैंने पूछा कि कुछ मिला? कुछ लाए? तो वह कहने लगा, आज तो नहीं, लेकिन कल फिर कोशिश करेंगे। फिर वह सो गया। वह दिन भर सोया रहा। दोपहर को उठा तो बड़ा मस्त था, नाचता था, गाता

था। मैंने उससे कहा, कुछ मिला नहीं? फिर कल मिल जाएगा? फिर रात गयी, मैं महीने भर से उसके घर था। और हर बार यह हुआ कि सुबह वह आया और मैंने पूछा, कहो कुछ मिला, और वह कहता आज नहीं मिला, लेकिन कल फिर कोशिश करेंगे। महीने बाद मैंने छोड़ दिया उसका घर। फिर मैं भगवान की शोध में वर्षों भटकता रहा और बार-बार ऐसा होने लगा कि नहीं मिलता, तो छोड़ यह खयाल। तभी उस चोर का खयाल आ जाता कि वह आदमी रोज लौट कर कहता था कि कल फिर कोशिश करूंगा। वह तो साधारण धन चुराने गया था, फिर भी हिम्मत बड़ी थी। हम भगवान को चुराने चले थे और बड़ी कमजोर है, कैसे काम चलेगा? तो फिर मैं टिका ही रहा, और जब भी हारने लगता मन, तो फिर उस चोर का खयाल आ जाता, जो कहता कि कल और कोशिश करेंगे। तो उस चोर से जो मैंने सीखा था, उसी से परमात्मा को पाया, नहीं तो पा नहीं सकता था। तो उसने मरते वक्त ऐसी बहुत सी बातें कहीं, क्योंकि बहुत से गुरु मिले उसे।

एक गांव से गुजरता था, एक छोटा सा बच्चा दिया लिए जा रहा था। पूछा उससे, कहां जाते हो दिया लेकर? उसने कहा, मंदिर में जाना है। तो मैंने उससे कहा, कि तुमने जलाया है दिया? तो उसने कहा, मैंने ही जलाया है। मैंने उससे पूछा जब तुमने ही जलाया है, तो तुम्हें पता होगा कि रोशनी कहां से आयी है। बता सकते हो? तो उस बच्चे ने नीचे से ऊपर तक मुझे देखा। फूंक मार कर रोशनी बुझा दी और कहा कि अभी आपके सामने चली गयी, बता सकते हैं, कहां चली गयी है? तो मैं भी बता दूंगा कि कहां से आयी थी। तो मैं सोचता हूं, वही चली गयी होगी, जहां से आयी थी। उस बच्चे ने कहा कहां चली गयी होगी?

तो, उस बच्चे के पैर छूने पड़े। और कोई उपाय न था। नमस्कार करना पड़ा। कि तू अच्छा मिल गया। हमने तो मजाक किया था, लेकिन मजाक उल्टा पड़ गया बहुत भारी पड़ गया। अज्ञान इस बुरी तरह से दिखाई पड़ा, लेकिन ज्योति का पता नहीं चला कि कहां से आती है और कहां जाती है! और हम बड़े ज्ञान की बातें किए जा रहे हैं। उस दिन से मैंने ज्ञान की बातें करना बंद कर दिया। क्या फायदा? जब एक ज्योति का पता नहीं तो भीतर की ज्योति की बातें करने में मैं चुप रहने लगा, उससे बच्चे ने चुप करवाया।

हजारों किताबें पढ़ी, जिनमें लिखा था कि मौन रहो। नहीं रहा लेकिन उस बच्चे ने ऐसा चुप करवा दिया कि कई वर्ष बीत गए, मैं नहीं बोला। लोग पूछते थे, बोलो। तो मैं लिख देता था कि दिए की ज्योति कहां जाती है बताओ? मतलब क्या बोलने का? कुछ पता नहीं है तो बोलूं क्या?

तो इसको मैं कहता हूं, एटीट्यूट आफ लर्निंग और डिसाइपलशिप, शिष्यत्व। गुरु तो बिलकुल नहीं होने चाहिए दुनिया में, सब शिष्य होने चाहिए। और अभी हालत यह है कि गुरु सब हैं, शिष्य खोजना बहुत मुश्किल है।

जीना ही है लक्ष्य

दो तरह के लोग है: एक वे हैं जो सदा लक्ष्य में जीते हैं—जो बिना लक्ष्य के एक मिनट जी नहीं सकते। अगर प्रेम कर रहे हैं तो भी लक्ष्य है, गीत गा रहे हैं तो भी लक्ष्य है। जो भी कर रहे हैं, उसका लक्ष्य है। ऐसे आदमी हमेशा टेंशन में जीते हैं। ऐसे आदमी को मैं अधार्मिक आदमी कहता हूं—अधार्मिक और उस आदमी को मैं धार्मिक आदमी कहता हूं जो जहां है वहीं जीता है।

एक झेन फकीर हुआ बोकोजू। एक आदमी उससे मिलने गया। उससे पूछा, तुम्हारी साधना क्या है? उस वक्त वह बगीचे में गड्ढा खोद रहा था। तो उसने कहा, गड्ढा खोदना। आगंतुक ने कहा, ऐसी साधना कभी सुनी नहीं—क्या हम भी गड्ढा खोदें, कि कहीं पहुंच जाएंगे? उसने कहा, कहीं पहुंचने के लिए गड्ढा खोदना साधना नहीं रह जाएगा। हम कहीं पहुंचने के लिए नहीं खोद रहे हैं सिर्फ गड्ढा खोद रहे हैं। और गड्ढा खोदने में बड़ा आनंद आता है। फिर भी उसने पूछा कि बताओ, मैं कैसे जीऊं? तो उसने कहा, मुझे जब नींद आती है तब सो जाता हूं और जब मेरी नींद टूटती है, तब उठ जाता हूं। जब भूख लगती है, खाना खा लेता हूं। जब भूख नहीं लगती है, तो नहीं खाता हूं। जब चुप होने का मन होता है तो चुप हो जाता हूं; जब बोलने का मन होता है, तो बोलने लगता हूं। मैं एक सूखे पत्ते की तरह हो गया हूं। हवाएं पूरब ले जाती हैं तो पूरब चला जात हूं, पश्चिम ले जाती हैं तो पश्चिम चला जाता हूं। और जब

हवाएं उसे जमीन पर गिरा देती है, तब विश्राम करने लगता हूं। और जब हवाएं छाती पर उठा लेती हैं और आकाश में चढ़ा देती हैं, तो आकाश में तैरने लगता हूं। मैं एक सूखा पत्ता हूं। मैंने जिंदगी को स्वीकार कर लिया है।

एक तो लक्ष्य से जीना। तो साधारण आदमी को वही सिखाया गया है कि लक्ष्य से जीओ–धन कमाओ, यश कमाओ, पद कमाओ यह बदलो, वह बदलो। ऐसे आदमी जी रहा है–चाहे आजादी लानेवाला है, चाहे गुलामी लानेवाला है। सब लक्ष्य से जी रहा है आदमी। सारी आदमियत लक्ष्य से जी रही है। कुछ थोड़े से लोग कभी ऐसे भी होते हैं, जो लक्ष्य से नहीं जीते, वे सिर्फ जीते हैं। अर्थात जीना ही लक्ष्य है।तो मेरी समझ यह है कि अगर आनंद की दिशा में जाना हो, तो लक्ष्य के ऊपर उठना जरूरी है, उसके बियांड जाना जरूरी है। और अगर दुख की दिशा में जाना हो तो, लक्ष्य पकड़कर चलना पड़ता है। वह दुनिया उसे पकड़कर चलती है। राष्ट्र चलते हैं, समाज चलते हैं, लेकिन मैं मानता हूं कि ऐसा चलना गलत है। वैसी गुलामी भी गलत है, वैसी आजादी भी गलत है। और होता क्या है कि एक गलती को मिटाने के लिए दूसरी गलती लानी पड़ती है, लेकिन दूसरी गलती से वह ठीक नहीं हो जाती है।

मैंने सुना है–एक गांव में एक आदमी ने कांच साफ करने का धंधा शुरू किया। उसने एक पार्टनर रखा। वह पार्टनर पहले जाकर लोगों के कांच गंदे कर आता। तीन दिन बाद वह आदमी निकलता था और चिल्लाता था, कांच साफ करवा लो। लोग उससे कांच साफ करवाते हैं। कहते हैं, तुमने बड़ी कृपा की। तुम आ गए, बड़ी कृपा है, हम बड़े परेशान हैं, सब खिड़कियां गंदी हो गयी हैं हर गांव में यही होता है। वह आदमी चार छह दिन पहले कांच गंदे कर आता। वे दोनों एक ही धंधे के पार्टनर हैं।

ये गुलामी लानेवाले और आजादी लानेवाले एक ही धंधे के पार्टनर हैं। बहुत गहरे में दोनों लक्ष्य वाले हैं। वह भी एक लक्ष्य लेकर आ रहे हैं, ये भी एक लक्ष्य लेकर आ रहे हैं! मेरा मतलब समझे न? वह गुलामी को मिटा रहे हैं, वह कोलतार पोत गया अभी कोई उसको मिटानेवाला आ गया है। वे हैं सब पार्टनर, एक ही बिजनेस है उनका। उनमें कोई बहुत फर्क नहीं है।

कुछ ऐसे लोग भी हैं, जिन्हें किसी धंधे से मतलब नहीं है। जिन्हें जीना ही काफी है। और मैं ऐसे लोगों का–अधिकतम लोग ऐसे हो जाए–तो मानता

हूं कि कभी एक ऐसा समाज भी बन सकता है, जो बस जीता हो। तब स्वर्ग होगा। यानी मैं मानता हूं कि स्वर्ग नर्क में एक ही फर्क हो सकता है—अगर कहीं स्वर्ग और नर्क है तो स्वर्ग तो लोग सिर्फ जीते होंगे, और नर्क में लोग योजनाएं बनाते होंगे जीने की—कल की, आगे की, कभी की।

जिएंगे कभी

श रद बाबू की एक किताब है, जिसमें एक लड़की है कमल। वह एक कलाकार से शादी करके आ गयी है। जिस मकान में वह कलाकार उस लड़की को लेकर आया है, उस मकान का मालिक बूढ़ा है, वह बहुत घबड़ा गया है। लड़की बड़ी सुंदर है और बड़ी निर्दोष मालूम पड़ती है। दोपहर को जब कलाकार बाहर गया है, तो बूढ़ा उस लड़की से कहता है कि पागल, तुझे कुछ पता भी है, यह आदमी और भी दस-पांच औरतों को यहां ला चुका है? दो-चार महीने से ज्यादा नहीं चलती है एक स्त्री। तूने ठीक से शादी कर ली? कानून से? नहीं तो कल मुश्किल में पड़ जाएगी।

उस लड़की ने कहा, यह हुआ नहीं, यह तो बड़ा अच्छा हुआ। वह तो कहता था कि कानून से शादी कर लो। लेकिन मैंने ही कहा, शादी की क्या जरूरत है? प्रेम ही काफी है। यह तो बड़ा अच्छा हुआ। अगर हम कानून से शादी कर लेते, तो बड़ी मुश्किल में पड़ जाते; क्योंकि तीन महीने बाद जब वह छोड़ता, तो छोड़ न सकता। जब छोड़ना चाहता, तो छूटना तो हो ही जाता, फिर कानून रह जाता। यह तो बड़ा अच्छा हुआ, भगवान की कृपा।

उस बूढ़े ने कहा, पागल तुझे पता नहीं है। यह सारा प्रेम चुक जाएगा जल्दी। तो उसे लड़की ने उस बूढ़े से कहा कि मालूम होता है आपने कभी प्रेम पहचाना नहीं। क्योंकि जब प्रेम होता है, तो क्षण काफी होता है। उसके आगे के क्षण की फिकर किसको होती है? वह फिकर तो जिसको प्रेम नहीं होता, उसी को होती है। आगे के क्षण की फिकर—कि कल भी प्रेम होगा कि नहीं, यह फिकर पैदा ही तब होती है, जब प्रेम नहीं हो जाता है। उसने कहा, अभी तो प्रेम है। और अब तक है, है। और जब नहीं होगा, नहीं होगा। उपाय क्या है? अभी है।

और तुमने अच्छा बता दिया। अगर पंद्रह दिन रहना है प्रेम, तो फिर पूरा तो जी लूं! फिर एक क्षण खोना ठीक नहीं है। क्योंकि पंद्रह साल रहता, तो आराम से भी जी सकते थे, और अगर पंद्रह दिन रहना है, तो और भी फुर्सत नहीं रह जाती। फिर कभी चूक भी सकते थे। बीच में छुट्टी भी रख सकते थे। पंद्रह ही दिन होगा न? तब तो एक-एक क्षण मूल्यवान हो गया।

तो, मैं मानता हूं कि चूंकि हम एकदम दुख में हैं, एकदम व्यर्थता में हैं, और कोई रस नहीं है, कोई आनंद नहीं है किसी काम में, इसलिए हम रस और आनंद लक्ष्य में रखकर सुविधा बनाते हैं जीने की। वहां रख लेते हैं कि कल होगा, कल होगा। आज तकलीफ है, झेल लो; आज मुश्किल है, झेल लो। कल सब ठीक हो जाएगा, वह लक्ष्य मिल जाएगा, तो सब ठीक हो जाएगा। आज के जीने की जो कठिनाई है, उसे हम कल के लक्ष्य को बनाकर सरल बनाने की कोशिश करते हैं कि आज जीना मुश्किल हो जाए। लेकिन जब आज आनंद हो तो कल के लक्ष्य का सवाल क्या है? कल है ही नहीं!

एक जर्मन मिस्टिक हुआ हकहार्ट। वह एक कहानी कहता था। एक आदमी ने ज्ञान इकट्ठा करने के लिए दुनिया की सारी किताबें इकट्ठी कीं। उसने सोचा कि किताबें इकट्ठी कर लूं ताकि ज्ञान मिल सके। तो ज्ञान लक्ष्य बनाया, किताबें संग्रह कीं। संग्रह करते-करते वह साठ साल का हो गया, लेकिन किताबें अभी भी बहुत बाकी रह गयीं। और उसने कहा जिंदगी तो चुक जाती है, ज्ञान कब होगा? किसी ने उससे कहा कि पागल किताबें ही जुटाता रहेगा? उसने कहा, ज्ञान तो तभी होगा जब सब किताबें जुट जाएंगी। तो किताबें तो बहुत ज्यादा हैं, तो तेरी जिंदगी तो बहुत छोटी है। तेरी जिंदगी चुक जाएगी, किताबें नहीं जुटेंगी। तुझे जो ज्ञान प्राप्त करना हो, अभी कर ले। लेकिन उसने कहा, अब मैं क्या कर सकता हूं। इतनी किताबें हो गयीं–साठ साल का बूढ़ा आदमी, इतनी किताबें इकट्ठी करने लगा रहा, तो खयाल नहीं किया कि कितनी हो गयी। आज जाकर देखा, तो घबड़ा गया कि किताबें इतनी थीं कि साठ जन्मों में पड़ी नहीं जा सकती थीं।

तो, वह बीमार पड़ गया। उसने गांव के बड़े पंडितों को बुलाकर कहा, बड़ी कृपा होगी, मैं तो मर गया, साठ साल गंवा दिए। और अब मौत करीब आती है, और किताबें इतनी ज्यादा हैं, इन्हें संक्षिप्त कर दो, तो बड़ा हो। तुम सब पंडित लग जाओ, जो खर्च होगा दे दूंगा। लेकिन किताबें संक्षिप्त कर दो।

पंडितों ने पांच साल लगाए किताबें संक्षिप्त कर लें, तो ज्ञान मिल जाए। और वक्त संक्षिप्त करने में जा रहा है। फिर भी वे किताबें लेकर आए, तो पांच ऊंटों पर लद जाए, इतनी किताबें थीं। क्योंकि लाइब्रेरी तो इतनी बड़ी थी कि पांच सौ ऊंटों पर लद जाए। तो उसने कहा, पागलो, यह मुश्किल है, मैं कब पढ़ पाऊंगा? पांच ऊंटों पर नहीं हुई किताबें भी बहुत ज्यादा हैं। यह तो नहीं हो सकता है। तो और संक्षिप्त करो। पंडितों ने कहा, पांच वर्ष और लग जाएंगे।

पांच वर्ष और लगे। किताबें संक्षिप्त करके लाए। जब वे लोग किताबें लेकर आए तो वह बीमार, मरणासन्न पड़ा था। चिकित्सक घेरे खड़े थे। पांच किताब में संक्षिप्त कर लाए थे। उस आदमी ने सिर पीट लिया। उसने कहा, ये पांच किताबें मैं कब पढ़ूंगा? और संक्षिप्त करो। क्योंकि मुझे ज्ञान पाना है। उन्होंने और संक्षिप्त कीं। अब की बार जब दे आए, तब वह बेहोश हो गया। और चिकित्सकों ने कहा, घड़ी दो घड़ी का मेहमान हैं। पांच पन्नों में संक्षिप्त करके लाए थे। वे पांच पन्ने भी बहुत ज्यादा थे। चिकित्सकों ने कहा, पांच पन्ने कब पड़ेगा? क्योंकि मरा, अभी मरा। और संक्षिप्त करो। उन्होंने और संक्षिप्त किया, तो वे पांच शब्द लेकर आए, लेकिन अब वह आदमी मरने के कगार पर था। पांच शब्द नहीं कह पाए, उसके कान में, एक शब्द कह पाए। वह बेहोश था, लेकिन तब उसने सुना भी नहीं होगा। कोई कहता है, उन्होंने कहा, परमात्मा, कोई कहता है, मोक्ष, निर्वाण। कुछ भी कहा हो, कोई फर्क नहीं पड़ता।

और हम जिंदगी इसकी व्यवस्था में गंवाते हैं कि जिएंगे कभी।

यही तेरी साधना

चीन में प्रसिद्ध झेन फकीर हुआ, लिंची। जब वह ज्ञान को उपलब्ध हो गया तो उसके गुरु ने रात में, आधी रात में उसे बुलाया और कहा कि तू उपलब्ध हो गया। और तो मेरे पास भेंट देने को कुछ भी नहीं है, यह मेरा पुराना लबादा है, अब इसकी मुझे जरूरत भी नहीं है, क्योंकि मैं जल्दी ही शरीर छोड़ दूंगा, मैं इसी प्रतीक्षा में था कि कोई एकाध उपलब्ध हो जाए तो मेरे दीये को जलाए रखे, अब तू उपलब्ध हो गया, यह

तू लबादा ले ले और यहां से भाग जा, और जितनी दूर निकल सके निकल जा। उसने कहा, लेकिन भागने की क्या जरूरत है? लिंची के गुरु ने कहा, तुझे पता नहीं है, यहां जो मेरे पांच सौ और भिक्षु हैं वे मिलकर तुझे मार डालेंगे। वे बरदाश्त न कर सकेंगे।

और बरदाश्त न करने के कई कारण भी थे। पहला तो कारण यह था कि यह सबसे ज्यादा अज्ञात-नाम शिष्य था। इसको कोई जानता ही नहीं था। एक ऐसे काम में लगा था कि इसको कोई कभी जानता ही नहीं, इसका नाम भी लोगों को पता नहीं था। उन पांच सौ भिक्षुओं में बड़े प्रसिद्ध लोग थे—देश-भर में जिनका नाम था, ख्याति थी; पंडित थे, शास्त्रकार थे, विवादी थे, वक्ता थे, किताबें लिखी थीं, यश था, मान्यता थी, प्रतिष्ठा थी, ऐसे लोग थे।

गुरु ने पंद्रह दिन पहले घोषणा की थी कि मेरा अंतिम समय करीब आ गया और इसके पहले कि मैं जाऊं, मैं जानना चाहता हूं कि कौन है जिसको दीया उपलब्ध हो गया है। जो सोचता हो कि उसे उपलब्ध हो गया है वह आकर मेरे दरवाजे पर चार पंक्तियों में अपने जीवन का सार अनुभव लिख जाए। उन्हीं पंक्तियों से सिद्ध हो जाएगा कि वह उपलब्ध हो गया है या नहीं।

जो सबसे महापंडित था, लोकख्याति को उपलब्ध, उसने ही हिम्मत की—बाकी ने तो हिम्मत भी नहीं की, क्योंकि वे जानते थे गुरु को धोखा देना आसान नहीं है। अभी हुआ नहीं था अनुभव, तो कैसे लिख दें? लिखेंगे तो उधार होगा। शास्त्र उन ने भी पढ़े थे, शास्त्रों में अनुभव के शब्द भी पढ़े थे, चाहते तो वे भी चार पंक्तियां लिख सकते थे। लेकिन उन्होंने कहा कि यह तो झंझट खड़ी हो जाएगी। गुरु कोई साधारण गुरु नहीं था। अगर गलती हो तो मारपीट भी करता था, सिर तोड़ देता था। इस महापंडित ने भी रात जाकर अंधेरे में उसके दरवाजे पर चार पंक्तियां लिख दीं। पंक्तियां बड़ी प्यारी और प्रसिद्ध पंक्तियां हैं। पंक्तियां थीं कि मन एक दर्पण की भांति है। इस पर कर्म की, विचार की धूल जम जाती है। उस धूल को झाड़ दें, दर्पण निर्मल हो जाए—बस यही उपलब्धि है, यही समाधि है।"

अब और क्या कहने को रहा? कह दी बात! हो गयी बात! लेकिन इसने भी रात को अंधेरे में लिखी और दस्तखत नहीं किए। क्योंकि इसे यह पता था कि यह मैं कह तो रहा हूं, मगर यह अनुभव मेरा नहीं है; यह दर्पण मेरा

साफ नहीं हुआ है अभी। असल में यह दर्पण पर जमी धूल ही बोल रही है, यह दर्पण नहीं बोल रहा है। पता तो उसे था। अपने को कैसे धोखा दोगे? तो उसने दस्तखत नहीं किए थे, कि अगर गुरु कह देगा कि हां ठीक है, तो सुबह जाकर घोषणा कर दूंगा कि मैंने लिखा; और गुरु अगर कह देगा कि ठीक नहीं, तो चुपचाप रहूंगा, बात ही नहीं उठेगी, पता नहीं किसने लिखा। बेईमानी यहां भी कर गया वह!

सुबह गुरु उठा और उसने कहा, पकड़ो इस आदमी को! किसने यह मेरी दीवाल खराब की? इसकी पिटाई करनी होगी। मगर पकड़ो कैसे? किसी का नाम तो था ही नहीं। बात आयी और गयी हो गयी। सारे आश्रम में एक ही चर्चा थी कि पंक्तियां हैं तो बड़ी सुंदर! मगर पंक्तियों के सौंदर्य का थोड़े ही सवाल है। पंक्तियों का सत्य क्या है? उसने बड़ी कविता में बांधकर लिखा था, बड़े प्यारे ढंग से लिखा था, कैलिग्राफी" सुंदर थी, पंक्तियां सुंदर थीं, शब्द ठीक बिठाए थे–और सार की बात कह दी थी, शास्त्रों का सारा सार आ गया था–यही चर्चा का विषय था। बड़ी सरगर्मी थी। सभी बात कर रहे थे कि और इसमें क्या सुधार हो सकता है? इस बूढ़े को कुछ पसंद ही नहीं आता! नाराज हो रहे थे कि जिसने भी लिखी हों, पंक्तियां तो सुंदर हैं।

ऐसे ही बात करते हुए चार भिक्षु भोजनालय से बाहर निकल रहे थे कि ये लिंची चावल कूट रहा था–इसका काम ही चावल कूटना था। यह जब आया था बारह साल पहले और इसने गुरु से कहा था कि मुझे अंगीकार कर लो, तो गुरु ने इसकी तरफ देखा था और कहा था कि तू सच में बदलना चाहता है? धार्मिक होना चाहता है या केवल धर्म की बातें जानना चाहता है? उसने कहा था, जब आप जैसा सद्गुरु मिले तो धर्म की बातें जानकर क्या करूंगा? धर्म की बात तो कहीं भी सस्ते पंडित-पुरोहितों से जान लेता, वे तो गांव-गांव उपलब्ध थे। धर्म की बातें नहीं जानना है, धर्म जानना है।

तो गुरु ने कहा था, फिर सुन! फिर तू चला जा आश्रम के चौके में और चावल कूट! और अब दुबारा मेरे पास मत आना। बस चावल कूट, और कुछ मत करना। यही तेरा ध्यान, यही तेरी विधि, यही तेरी साधना; जब जरूरत होगी, मैं आ जाऊंगा।

बारह साल बीत गए थे, न तो गुरु आया, न लिंची दुबारा गुरु के पास गया।

न तो शास्त्र पढ़े इन बारह सालों में–फुरसत ही न थी–न बातचीत की लोगों से। और वहां बड़े-बड़े पंडित थे, ज्ञानी-ध्यानी थे, कौन इस लिंची से बात करे! यह तो सबसे निम्नतम था–शूद्र समझो। चावल कूटता, सुबह से उठकर सांझ तक चावल कूटता रहता–पांच सौ भिक्षुओं के लिए चावल कूटना, बड़ा काम था! मगर चावल कूटते-कूटते-कूटते–कुछ सोच-विचार को तो था भी नहीं, गुरु ने कहा था, और कुछ करना भी मत, तो उसने कुछ और किया भी नहीं, सोचा भी नहीं–बस चावल कूटना और चावल कूटना! और चावल कूटना! बारह साल बीतते-बीतते तो विचार समाप्त हो गए। दर्पण खाली हो गया! धूल-वूल जमने की जरूरत ही न रही। धूल तो रोज जमानी पड़ती है तो जमती है। बारह साल कुछ सोचा ही नहीं! सोचने को कुछ था भी नहीं। चावल ही कूटना था, इसमें सोचने जैसी बात भी क्या थी?

ये चार भिक्षु बात करते निकल रहे थे कि लिंची ने सुना, वे पंक्तियां दोहरा रहे थे कि अद्‌भुत पंक्तियां हैं कि मन एक दर्पण है; दर्पण पर विचार की, कर्म की धूल जम जाती है; धूल को झाड़ दो, दर्पण शुद्ध हुआ–यही समाधि है।" प्यारे वचन हैं! मगर उस बूढ़े को कुछ रास नहीं आता। अब इसके ऊपर और कौन सुधार कर सकेगा?

यह लिंची चावल कूट रहा था, हंसने लगा। इसकी हंसी सुनकर वे चारों चौंके। इसे कभी किसी ने हंसते भी नहीं देखा था। उन्होंने पूछा, तुम हंसे क्यों? इसने कहा कि गुरु ठीक कहते हैं। सब बकवास है।

उन्होंने कहा, यह तुम बोल रहे हो, जो बारह साल से सिर्फ चावल कूटते हो? .....तो उन्होंने मजाक में कहा, तो फिर तुम लिख दो चल कर। उसने कहा, बड़ी मुश्किल है, क्योंकि बारह साल में मैं लिखना भी भूल गया। तुम लिख दो तो मैं बोल देता हूं।

वह गया, उसने चार पंक्तियां बोल दीं, किसीने लिख दीं दीवाल पर। चार पंक्तियां थीं– मन का कोई दर्पण नहीं, धूल जमेगी कहां? जिसने यह जाना, उसने जाना।"

रात आधी, गुरु ने उसे बुलाया और कहा कि तूने पा लिया, मगर अब तू भाग जा। तुझे बरदाश्त नहीं किया जा सकेगा। लोग मार डालेंगे। लबादा दे दिया और लिंची को भगा दिया आश्रम से।

और निश्चित चेष्टाएं की गयीं। लोगों ने उसका पीछा किया। उसको मारने की चेष्टाएं की गयीं। क्योंकि बड़े-बड़े पंडित थे। और तुम जानते हो पंडितों का अहंकार! उनको यह चोट भारी हो गयी कि एक चावल कूटनेवाला और ज्ञान को उपलब्ध हो जाए और हम बैठे शास्त्र पढ़ते रहें; और हम पूजा किए, पाठ किए, मंत्र-तंत्र किए और यह आदमी कुछ भी नहीं किया, चावल कूटता रहा, यह उपलब्ध हो जाए? यह बरदाश्त के बाहर है!

स्वर्ग नरक

मैं ने एक छोटी-सी कहानी सुनी है। योरोप का एक बहुत बड़ा ईसाई पुरोहित प्रवचन देने चर्च में गया था। वह बोला तो उसने कहा कि जो लोग पुण्य करते हैं, वे स्वर्ग में प्रवेश पाएंगे, और जो पाप करते हैं, वे नरक में। और फिर उसने यह भी कहा—जो परमात्मा को याद करते हैं, वे स्वर्ग में प्रवेश पाएंगे, जो परमात्मा को भूल जाते हैं, वे नरक में। एक आदमी उठकर खड़ा हो गया। उसने कहा—आपने मुझे मुश्किल में डाल दिया। मेरे लिए एक सवाल उठ गया। पुरोहित ने सोचा भी नहीं था यह सवाल। जब उठा तब उसे समझ में आया। सवाल जरूर जटिल है।

उस आदमी ने पूछा कि मैं यह पूछना चाहता हूं, आपने कहा जो पुण्य करते हैं वे स्वर्ग में जाएंगे, और जो प्रभु को स्मरण करते हैं वे स्वर्ग में जाएंगे। और जो पाप करते हैं और जो प्रभु को स्मरण नहीं करते, वे नरक जाएंगे। मेरा सवाल यह है कि जो पुण्य करते हैं और प्रभु को स्मरण नहीं करते हैं, वे कहां जाएंगे? और जो प्रभु का स्मरण करते हैं और पाप करते हैं, वे कहां जाएंगे?

वह पादरी भी भौंचक्का रह गया। उसे कुछ सूझा नहीं। एकदम सिर घूम गया। क्योंकि अड़चन खड़ी हो गयी। अगर वह यह कहे कि जो लोग पुण्य करते हैं और प्रभु को स्मरण नहीं करते, वे भी स्वर्ग जाएंगे, तो सीधा सवाल है—फिर प्रभु को स्मरण करने की जरूरत क्या है? और जो लोग प्रभु का स्मरण करते हैं और पाप करते हैं और उन्हें नरक जाना पड़ता है, तो फिर सवाल यह है कि प्रभु के स्मरण से फायदा क्या हुआ? नरक तो गए ही! तो पाप और पुण्य

काफी हैं! फिर प्रभु को बीच में लेने की जरूरत क्या है? यही तो कारण था कि जैन और बौद्ध, दो धर्मों ने प्रभु को बीच में नहीं लिया, परमात्मा को बीच में नहीं लिया, उन्होंने पाप और पुण्य के सिद्धांत से काम चला लिया। जो बुरा करता है, वह द:ख पाएगा; जो भला करता है, वह सुख पाएगा; बात खतम हो गयी; बीच में परमात्मा को लेने की जरूरत नहीं मानी? क्योंकि परमात्मा को लेने से जटिलता बढ़ेगी। यही सवाल उठेगा।

उस पुरोहित ने कहा–मुझे क्षमा करें, मैंने इस तरह कभी सोचा नहीं। मुझे सात दिन का मौका दें, अगले रविवार मैं इसका उत्तर दूंगा। सात दिन वह सो भी नहीं सका, बहुत सिर मारा–आदमी भी ईमानदार रहा होगा, नहीं तो पुरोहित चालबाज होते हैं, कुछ भी उत्तर निकाल लाता; ईमानदार था, उसको यह प्रश्न तीर की तरह चुभने लगा। और यह प्रश्न था महत्वपूर्ण। सातवें दिन वह सुबह जल्दी ही भोर में चर्च पहुंच गया, अभी तक उत्तर नहीं आया है, सोचा कि जाकर चर्च में ही बैठ जाऊं, प्रभु से परमात्मा से प्रार्थना करूं कि तुम्हीं बताओ, अब मैं क्या उत्तर दूं? वह आदमी आता होगा और सारे गांव में खबर फैल गयी है, सारा गांव आ रहा है। मैं जो भी उत्तर सोचता हूं, गलत मालूम होता है। इन दोनों के बीच कैसे तालमेल बिठाऊं? हाथ जोड़कर प्रभु की प्रार्थना में झुका। जल्दी उठ आया था, रात सोया भी नहीं था, वहां सिर झुकाए हुए वेदी के सामने उसे झपकी आ गयी। उसने एक सपना देखा। सपने में उसने वही देखा जो सात दिन से उसके प्राणों को मथ रहा था।

उसने देखा कि वह एक ट्रेन में सवार है। उसने पूछा–भई यह ट्रेन कहां जा रही है? लोगों ने कहा–स्वर्ग जा रही है। उसने कहा–यह अच्छा ही हुआ, वहीं चलकर देख लूं कि हालत क्या है? वह स्वर्ग पहुंचा, उसे बड़ी हैरानी हुई। उसने किताबों में जो वर्णन देखे थे स्वर्ग के, बड़े रंगीन थे, बड़े सुवासपूर्ण थे, और स्वर्ग बिल्कुल उजड़ा-सा मालूम पड़ रहा था। वीरान-सा मालूम पड़ता था। खंडहर मालूम पड़ता था। धूल-धवांस जमी थी। उसने पूछा–यह मामला क्या है? ऐसी शकल तो नरक की होनी चाहिए। कहीं कुछ भूल-चूक तो नहीं। उतरा, लेकिन स्वर्ग ही था, भूल-चूक नहीं थी। उसने पूछा कि मैं यह जानना चाहता हूं–यहां कुछ लोग हैं? जैसे बुद्ध। क्योंकि बुद्ध ने पुण्य किया, प्रभु को स्मरण नहीं किया। सुकरात। पुण्य तो किया, लेकिन प्रभु को स्मरण नहीं किया।

यहां बुद्ध और सुकरात जैसे लोग हैं? उन्होंने कहा—भई, नाम नहीं सुना कभी। बुद्ध और सुकरात का हमें कुछ पता नहीं है।

भागदौड़ कर उसने पता लगाया कि नरक भी कोई ट्रेन जाती है कि नहीं? एक ट्रेन नरक जा रही थी, तैयार ही खड़ी थी, वह सवार हो गया। नरक पहुंचा। बड़ा हैरान हुआ। वहां बड़ी ताजगी थी, बड़ी रौनक थी, बड़ा रंग था, बड़ी सुगंध थी; उसे तो भरोसा ही नहीं आया कि यह हो क्या रहा है, सब उल्टा हुआ जा रहा है; यह नरक है? उतरकर उसने पूछा कि यहां सुकरात और बुद्ध जैसे लोग हैं? उन्होंने कहा है, उनके ही आने के कारण तो नरक की यह रंगत आयी है। यह जो सुगंध देख रहे हो, यह जो सुवास देख रहे हो, यहां जो चारों तरफ महोत्सव देख रहे हो, इसी तरह के लोगों के आने की वजह से तो यह रंगत आयी है!

तभी उसकी नींद खुल गयी। लोग आने शुरू हो गए थे। उसने खड़े होकर मंच पर कहा कि मैं तो उत्तर नहीं जानता, लेकिन यह सपना कहे देता हूं। इस सपने से इतना सार मैंने निकाला कि जहां भले लोग हैं वहां स्वर्ग है और जहां भले लोग नहीं हैं वहां नरक है। यह बात गलत है कि पुण्य करनेवाले लोग स्वर्ग जाते हैं, पुण्य करनेवाले लोग जहां जाते हैं वहां स्वर्ग बन जाता है। यह बात गलत है कि पाप करनेवाले लोग नरक जाते हैं। पाप करनेवाले लोग स्वर्ग भी चले जाएं तो भी जहां जाते हैं वहां नरक बन जाता है।

तुम औपचारिक धर्म में मत उलझ जाना—मंदिर हो आए, मस्जिद हो आए, प्रार्थना कर ली, पाठ कर लिया। नहीं, धर्म तो एक ही है—वह प्रेम है। और धर्म के इस अनुभव को, प्रेम को जगाने का उपाय एक ही है—वह होश है।

इन दो शब्दों में, इन दो कदमों में धर्म की पूरी यात्रा हो जाती है। इतना ही फासला है संसार में और मोक्ष में। बस दो कदम का फासला है। एक कदम का नाम प्रेम, एक कदम का नाम ध्यान। ये दो कदम तुम उठा लो। बस ये दो कदम उठ जाएं—भीतर ध्यान हो, बाहर की तरफ बहता हुआ प्रेम हो; भीतर गहरा होता हुआ ध्यान हो, बाहर बंटता हुआ प्रेम हो; ध्यान बन जाए तुम्हारी जड़ और प्रेम बन जाए तुम्हारे फूल—खिल जाएं।

जिंदगी एक सराय

मैं एक झूठा चैन है, एक असली चैन है। एक सराय को घर मानना है और फिर एक घर को पा लेना है। यह झूठे चैन में जिंदगी ही व्यर्थ जाती है। यह तो छिन गयी बात। अब लौटने का कोई उपाय नहीं। जब एक दफे जान लिया कि यह सराय है, अब तुम लाख उपाय करो, खूब सजाओ दीवालों को, बंदनवार लटकाओ, व्यवस्था जमाओ, नया फर्नीचर लाओ, मगर एक बार पता चल गया कि यह सराय है, अब चैन नहीं होगा—चैन नहीं हो सकता। यह जिंदगी सराय है।

सूफी फकीर हुआ—इब्राहीम। सम्राट था, अपने महल में सोया था, रात देखा—छप्पर पर कोई चल रहा है। उसने पूछा—कौन है, भाई? ऊपर छप्पर पर क्या कर रहा है? सम्राट वैसे ही घबड़ाया हुआ आदमी होता है। छप्पर पर कौन चढ़ आया? क्या कर रहा है? कोई दुश्मन तो नहीं आ गया? खपरे उठाकर अंदर तो नहीं कूद पड़ेगा? उस ऊपर वाले आदमी ने कहा—तुम शांति से सोए रहो, मेरा ऊंट खो गया है, मैं उसको खोज रहा हूं। इब्राहीम तो हैरान हो गया कि ऊंट खो गया है, छप्पर पर खोज रहे हो, राजमहल की! तुम्हारा ऊंट छप्पर पर कहां जाएगा? उठा। सिपाहियों को कहा कि पकड़ो इस आदमी को। या तो यह पागल है—और खतरनाक हो सकता है। लेकिन वह आदमी पकड़ा नहीं जा सका। वह निकल भागा।

दूसरे दिन इब्राहीम बड़ा उदास था। सिंहासन पर बैठा था, मगर उदास था। बार-बार उसे याद आने लगी—यह आदमी कौन था? रात छप्पर पर चढ़ा कैसे? पहरा इतना है! फिर निकल भी भागा। और उत्तर जो उसने दिया, ऊंट खोज रहा हूं! इससे दो बातें हो लेतीं तो हल हो जाता। रात-भर सो भी नहीं सका, इसी में पड़ा रहा सोच में और तभी उसने देखा कि द्वारपाल से कोई आदमी हुज्जत कर रहा है।

एक आदमी दरवाजे पर खड़ा कह रहा था द्वारपाल से—मुझे रुकने दो, मुझे इस धर्मशाला में रुकने दो। मैं रुक कर रहूंगा। द्वारपाल कह रहा था—तुम पागल

तो नहीं हो, होश में हो? यह धर्मशाला नहीं है, यह सम्राट का निवासस्थान है, यह सम्राट का खुद का निजी घर है। और वह आदमी कह रहा था—छोड़ो बकवास, मुझे पक्का पता है—यह धर्मशाला है, सराय है। सम्राट ने भीतर से आवाज सुनी, यह आवाज पहचानी मालूम हुई, तत्क्षण उसे खयाल आया यह वही आवाज है जो रात छप्पर पर कह रहा था आदमी। वही कड़क आवाज में, वही विशिष्टता। उसने कहा—इस आदमी को भीतर लाओ, भगाओ मत। वह आदमी भीतर लाया गया—एक मस्त फकीर था।

उस फकीर से सम्राट ने कहा—यह हुज्जत करनी शोभा देती है? तुम जानते हो भलीभांति यह सम्राट का महल है। मुझे देखते हो? यह मेरा सिंहासन देखते हो? यह मेरा दरबार देखते हो? यह धर्मशाला नहीं है। और उस फकीर ने कहा—मैं फिर कहता हूं कि यह धर्मशाला है। और मैं इसमें रुकूंगा। उसने इतने बल से कहा कि सम्राट भी कंप गया भीतर। उससे पूछा—तुम किस प्रमाण से कहते हो कि धर्मशाला है? उस फकीर ने कहा—मैं पहले भी आया हूं तब यहां एक दूसरा आदमी बैठा था सिंहासन पर। और वह भी यही कहता था यह मेरा घर है। अब वह आदमी कहां है? सम्राट ने कहा—अब मैं समझा, वह मेरे पिता थे, वह स्वर्गीय हो गए। और उस फकीर ने कहा—उसके पहले भी मैं यहां आया था, तब एक तीसरा आदमी बैठा था, एक बुड्ढा यहां था, वह भी यही कह रहा था कि मेरा घर है, वह कहां है? सम्राट ने कहा—तुम फिजूल की बकवास में पड़े हो, वे मेरे दादा थे। उस फकीर ने कहा—जब इतने लोग यहां रहते हैं और अपना घर बताते हैं और चले जाते हैं, कोई भी रह नहीं पाता, यह क्या खाक घर है! तुम अगली बार मुझे मिलोगे? पक्का वायदा करते हो कि जब मैं दुबारा आऊंगा, तुम यहां रहोगे? हाथ-पैर कंप गए होंगे, पसीना आ गया होगा, झुरझुरी फैल गयी होगी इब्राहीम के हृदय में। बात तो सच थी। अगले दिन का भरोसा नहीं है। और इतने लोग इस महल में रह चुके और सभी ने इसको घर समझा और सभी जा चुके—घर होता तो रहते, सराय ही है। कोई दो दिन ठहरता, कोई दो साल ठहरता है, कोई ज्यादा ठहर जाता है, मगर है तो सराय। इब्राहीम उतरकर नीचे खड़ा हो गया, उस फकीर के चरणों में गिर पड़ा और कहा कि तुम रुको, यह सराय ही है, मैं चला। उसी क्षण इब्राहीम ने महल छोड़ दिया।